Registration No. V-36244/2008-09 **ISSN :- 2350-0611**

The journal has been listed in 'UGC Approved List of Journals' with Journal No. – 48441 in previous list of UGC

JIFE Impact Factor – 5.23

Research Highlights

A Multidisciplinary Quarterly International Peer Reviewed Referred Research Journal

Editor
Dr. Kamlesh Kumar Singh
Assistant Professor
Department of Sociology
Pt. D.D.U. Govt. Girls P.G. College
Sevapuri, Varanasi

Volume - XII **No. - 3** **(July – Sept. 2025)**

(Part – III)

Published by
Future Fact Society
Varanasi (U.P.) India

Research Highlights - *A Referred Journal, Published by : Quarterly*

Correspondence Address :
C 4/270, Chetganj
Varanasi, (U.P.)
Pin. - 221 010
Mobile No. :- 09336924396
Email- researchhighlights1@gmail.com

Note :-

The views expressed in the journal "Research Highlights" are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Managing Editor
Avinash Kumar Gupta

©Publisher

ISSN : 2350-0611

Printed by
Interface Computer, B 31/13-6, Malviya Kunj, Lanka, Varanasi-221005 (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. T. N. Singh,** United Nations Professor of Plant Physiology, Department of Plant Sciences, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Prof. S.K. Bhatnagar,** School for Legal Studies, BBAU, Lucknow
- **Prof. (Dr.) Munna Singh**, Head of Department, Physical Education and Sports Sciences Department, Handia P.G. College, Handia, Prayagraj, U.P.
- **Dr Achchhe Lal Yadav**, Assistant Professor, Physical Education, Pt. D. D. U. Government Degree College, Saidpur, Ghazipur
- **Dr. Pramod Rao,** Assistant Professor, Department of Hindi, VBS Purvanchal University, Jaunpur
- **Dr. Anil Pratap Giri,** Assistant Professor, Department of Sanskrit, Pondicherry Central University, Pondicherry.

EDITORIAL BOARD

- **Dr. Sanjay Singh,** Department of Plant Science, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Dr. Diwakar Pradhan,** Professor in Nepali, Head, Deptt. of Indian Languages Faculty of Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Shailendra Singh,** Professor and Head, Department of Sociology, J.S. University, Sikohabad, U.P.
- **Dr. Manish Arora,** Associate Professor, Faculty of Visual Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Surjoday Bhattacharya,** Assistant Professor, Government Degree College, Pratapgarh U P
- **Dr. Upasana Ray,** Associate Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Krishna Kant Tripathi,** Assistant Professor, Deptt. of Education, Central University of Mijoram, Mijoram
- **Dr. Urjaswita Singh,** Assistant Professor, Department of Economics, M.G. Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Satyapal Yadav,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Brajesh Kumar Prasad,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Dewendra Pratap Tiwari,** Assistant Professor, Department of Political Science, Shree Lakshmi Kishori Mahavidyalaya (A Constituent Unit of BRA Bihar University, Muzaffarpur), Bihar

- **Dr. Hena Hussain,** Assistant Professor, Department of Psychology, Oriental College, Patna City (A Constituent Unit of Patliputra University, Patna), Bihar
- **Dr. Santosh Kumar Singh,** Assistant Professor, P.G. Department of Psychology, J.P. University. Chapra
- **Dr. Ramkirti Singh,** Assistant Professor, Department of Psychology, Gorakhpur University, Gorakhpur
- **Dr. Girish Kumar Tiwari,** Assistant Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Vaibhav Kaithvas,** Assistant Professor, Department of Performing Art, Eklavya University, Sagar Road, Damoh, MP
- **Dr. Ranjeet Kumar Ranjan,** Assistant Professor, Department of Psychology, J.P. College, Narayanpur, Bihar
- **Dr. Paromita Chaubey,** Faculty of Education, Banaras Hindu University, Varanasi

EDITOR'S NOTE

It is a great honour to me to extend my warm greetings and welcome you all to the journal, **Research Highlights,** a refereed journal of multi disciplinary research. The journal, which is a peer-reviewed, will devote to the promotion of multi-disciplinary research and explorations to the South Asian and global community. It is our objective to provide a platform for the publication of new scholarly articles in the rapidly growing field of various disciplines. We are trying to encourage new research scholars and post graduate students by publishing their papers so that they may learn and participate in literary publishing through a professional internship. Scholarly and unpublished research articles, essays and interviews are invited from scholars, faculty researchers, writers, professors from all over the world.

Note: All outlook and perspectives articulated and revealed in our peer refereed journal are individual responsibility of the author concerned. Neither the editors nor publisher can be held responsible for them anyhow. Plagiarism will not be allowed at any level. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Hoping all of you shall enjoy our endeavors and those of our contributors.

Editor

CONTENTS

"Research Highlights"

➲	कॉलेज के छात्रों की शैक्षिक रुचि तथा शैक्षणिक प्रदर्शन के मध्य संबंधः एक तुलनात्मक अध्ययन ***ज्योति कुमारी*** ***डॉ. लाल बाबू सिंह***	01-04
➲	दृष्टिबाधित एवं सामान्य किशोरों में भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति तथा मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक मनोवैज्ञानिक अध्ययन ***विनीता कुमारी*** ***डॉ. गिरिजा उरॉव***	05-08
➲	मलिन बस्तियों के परिवारों में जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन एवं प्रतिबल (Resilience) के मध्य संबंधः एक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ***रागिनी कुमारी*** ***डॉ. गिरिजा उरॉव***	09-12
➲	रायगढ़ दरबार में संरक्षण प्राप्त प्रसिद्ध तबला वादक एवं उनकी रचनाएँ (उ. मुनीर खां, उ. कादिर बख्श, उ. नत्थू खां के विशेष सन्दर्भ में) ***किशन दास महंत*** ***डॉ. हरिओम हरि***	13-18
➲	भारत–म्यांमार संबंध ***डॉ. राहुल कुमार सिंह***	19-23
➲	वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन क्षमता संबंधी एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन ***अनिता कुमारी*** ***डॉ. रामदेव प्रसाद***	24-30
➲	वैदिक शिक्षा प्रणाली का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव : एक समीक्षात्मक अध्ययन ***डॉ. रणविजय कुमार सिंह***	31-34
➲	विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट : एक समीक्षात्मक अध्ययन ***प्राची प्रभा***	35-37
➲	60–दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम का स्नातक छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभावः अम्बेडकरनगर जनपद के पाँच महाविद्यालयों में प्री–पोस्ट परीक्षण आधारित अध्ययन ***सूर्यमणि यादव*** ***कैप्टन प्रो. (डॉ.) चन्द्र भान सिंह***	38-41
➲	वैश्विक एकात्मकता और पंडित दीनदयाल उपाध्याय ***डॉ. दीपमाला श्रीवास्तव***	42-43

➲	वैदिक ऋषि परम्परा का स्वरूप : ऋषि वशिष्ठ की परम्परा का दार्शनिक पक्ष ***शिखर श्रीवास्तव*** ***प्रो. प्रवेश भारद्वाज***	44-49
➲	भारत में तिब्बती सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखना : भारतीय संस्कृति के साथ समायोजन में चुनौतियाँ ***स्नेहलता*** ***डॉ. सीमा राणा***	50-53
➲	अकेली–प्रेम और सामाजिकता की निर्णायक कहानी ***उमापति यादव*** ***डॉ. गीता पंत***	54-57
➲	दलित शब्द का अवधारणात्मक विश्लेषण ***दीप्ति रश्मि***	58-60
➲	डिजिटल इंडिया के विशेष संदर्भ में भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की भूमिका ***राकेश रौशन***	61-64
➲	मीरजापुर जनपद के नवपाषाणकालीन मृदभाण्ड परम्परा ***प्रभाश दूबे***	65-66
➲	आधुनिकीकरण का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव ***आरती कुमारी***	67-69
➲	व्यक्ति के अकेलेपन को दूर करता मीडिया ***आनंद प्रकाश***	70-73

कॉलेज के छात्रों की शैक्षिक रुचि तथा शैक्षणिक प्रदर्शन के मध्य संबंधः एक तुलनात्मक अध्ययन

ज्योति कुमारी*
डॉ. लाल बाबू सिंह**

सारांश

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य कॉलेज के छात्रों की शैक्षिक रुचि तथा उनके शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच संबंध का परीक्षण करना है। इसके लिए विभिन्न संकायों–कला, विज्ञान तथा वाणिज्य के 150 छात्रों पर शैक्षिक रुचि मापन पैमाना तथा GPA अभिलेख के आधार पर सर्वेक्षण किया गया। परिणामों से ज्ञात हुआ कि शैक्षिक रुचि और शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच सकारात्मक तथा सार्थक सहसंबंध पाया गया। विज्ञान संकाय के छात्रों में शैक्षिक रुचि का स्तर सर्वाधिक तथा कला संकाय में न्यूनतम पाया गया। अध्ययन से स्पष्ट है कि रुचि–आधारित शिक्षण पद्धतियाँ विद्यार्थियों के प्रदर्शन को उल्लेखनीय रूप से बढ़ा सकती हैं।

मुख्य शब्द – शैक्षिक रुचि, शैक्षणिक प्रदर्शन, कॉलेज छात्र, प्रेरणा, अधिगम परिणाम, तुलनात्मक अध्ययन

भूमिका

उच्च शिक्षा का चरण विद्यार्थियों के जीवन का वह महत्वपूर्ण कालखंड है जहाँ वे न केवल अपने विषय–वस्तु का गहन अध्ययन करते हैं, बल्कि आत्म–खोज, लक्ष्य निर्धारण, करियर दिशा, जीवन–दर्शन और सामाजिक सहभागिता जैसे अनेक आयामों का अनुभव भी प्राप्त करते हैं। इस स्तर पर विद्यार्थियों का शैक्षणिक व्यवहार कई मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक कारकों से प्रभावित होता है। इनमें से शैक्षिक रुचि (Academic Interest) एक प्रमुख मनोवैज्ञानिक चर है जिसे अधिगम की गुणवत्ता और शैक्षणिक उपलब्धि का प्रभावी भविष्यवक्ता माना जाता है।

शैक्षिक रुचि को सामान्यतः वह सकारात्मक संज्ञानात्मक और भावनात्मक अवस्था कहा जाता है जिसमें विद्यार्थी किसी विषय को पढ़ने, समझने और उसके साथ जुड़ने में आनंद का अनुभव करता है। यह रुचि छात्र के ध्यान, जिज्ञासा, एकाग्रता, सहभागिता, आत्म–प्रेरणा और अकादमिक दृढ़ता को प्रभावित करती है। आधुनिक शैक्षिक अनुसंधान स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि रुचि का स्तर जितना उच्च होता है, अधिगम के परिणाम उतने ही बेहतर होते हैं।

भारत के उच्च शिक्षा परिदृश्य में प्रतिस्पर्धा, करियर अनिश्चितता, रोजगार के बदलते स्वरूप, सामाजिक अपेक्षाएँ तथा पारिवारिक दबाव विद्यार्थियों की रुचि व शैक्षणिक प्रदर्शन को गहराई से प्रभावित करते हैं। भारतीय परिवार अक्सर विषय चुनने में निर्णायक भूमिका निभाते हैं, जिसके कारण कई बार छात्र अपनी जन्मजात क्षमताओं और वास्तविक रुचि के विपरीत विषयों का चयन कर लेते हैं। इससे उनके प्रदर्शन में गिरावट दिखाई देती है। इसीलिए छात्रों की शैक्षिक रुचि का अध्ययन न केवल मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बल्कि शैक्षणिक व व्यावसायिक दृष्टि से भी अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

विभिन्न संकायों–कला, विज्ञान और वाणिज्य में रुचि का स्तर भिन्न पाया जाता है। विज्ञान के विद्यार्थियों को प्रयोगात्मक कार्यों, अवलोकन, शोध एवं व्यावहारिक गतिविधियों का अवसर मिलता है, जिससे उनकी संलग्नता अधिक होती है। वाणिज्य संकाय के छात्र केस स्टडी, व्यवसायिक मॉडलों और व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से विषयों में रुचि बनाए रखते हैं। इसके विपरीत, कला संकाय में विषय अपेक्षाकृत वैचारिक, विश्लेषणात्मक और व्यापक होने के कारण कुछ छात्रों के लिए रुचि बनाए रखना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। यही कारण है कि संकायवार शैक्षिक रुचि और शैक्षणिक उपलब्धियों में अंतर दिखाई देता है।

शैक्षणिक प्रदर्शन का मूल्यांकन सामान्यतः GPA, परीक्षा परिणाम, परियोजना मूल्यांकन, सत्रीय कार्य, और व्यवहारिक कार्यों के आधार पर किया जाता है। शोध यह दर्शाते हैं कि रुचि शैक्षणिक प्रदर्शन की दिशा,

* शोध छात्रा, मनोविज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
** शोध निर्देशक, (प्रोफेसर एवं प्रोक्टर), मनोविज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

तीव्रता और स्थिरता को निर्धारित करती है। जिन छात्रों में अपने विषय के प्रति वास्तविक आकर्षण, नवीनता की खोज और समझने की इच्छा अधिक होती है, वे दीर्घकालिक रूप से बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

इस प्रकार, वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य कॉलेज छात्रों की शैक्षिक रुचि के स्तर को मापना, उसका उनके शैक्षणिक प्रदर्शन से संबंध स्थापित करना तथा संकायों के बीच पाए जाने वाले अंतर का तुलनात्मक विश्लेषण करना है। यह अध्ययन शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी एवं रुचिकर बनाने के लिए महत्त्वपूर्ण सुझाव प्रदान कर सकता है।

सैद्धांतिक ढाँचा

शैक्षिक रुचि और शैक्षणिक प्रदर्शन के संबंध को समझने के लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिक सिद्धांत महत्वपूर्ण आधार प्रदान करते हैं। वर्तमान अध्ययन निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित हैः

1. आत्म–नियन्त्रण सिद्धांत (Self-Determination Theory – SDT; Deci & Ryan,1985)

यह सिद्धांत बताता है कि मनुष्यों में तीन प्राकृतिक मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ होती हैंः

1. स्वायत्तता – अपने निर्णय स्वयं लेने की क्षमता
2. दक्षता – विषय में स्वयं को सक्षम महसूस करना
3. संबद्धता – दूसरों से जुड़ाव और सहयोग

जब छात्रों की इन आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, तो वे विषय के प्रति आंतरिक रुचि विकसित करते हैं। आंतरिक रुचि होने पर विद्यार्थी अधिक समय देते हैं, सक्रिय रूप से सीखते हैं और प्रदर्शन बेहतर होता है।

2. अपेक्षा–मूल्य सिद्धांत (Expectancy–Value Theory – Wigfield & Eccles, 2000)

इस सिद्धांत के अनुसार, किसी विषय में रुचि तब बढ़ती है जबः

- छात्र को यह विश्वास हो कि वह उस विषय में सफल हो सकता है (Expectancy), और
- छात्र उस विषय को महत्त्वपूर्ण या उपयोगी समझता है

अतः उच्च अपेक्षा और मूल्य ⟶ उच्च रुचि ⟶ बेहतर शैक्षणिक प्रदर्शन।

3. सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत (Information Processing Theory)

इस सिद्धांत के अनुसार, रुचि ध्यान और एकाग्रता को बढ़ाती है।
जब विद्यार्थी किसी विषय में रुचि रखते हैं, तोः

- वे जानकारी को अधिक समय तक स्मृति में रखते हैं,
- उसे गहराई से संसाधित करते हैं,
- और परीक्षाओं में बेहतर recalled करते हैं।

4. फ्लो सिद्धांत (Flow Theory – Csikszentmihalyi, 1990)

यह सिद्धांत बताता है कि जब छात्र किसी विषय में इतनी रुचि रखते हैं कि वे उसमें पूर्णतः डूब जाते हैं, तो वह "Flow State" कहलाता है।
इस अवस्था में :

- समय का अहसास कम हो जाता है,
- एकाग्रता अधिक होती है,
- और परिणाम श्रेष्ठ आता है।

5. प्रेरणा सिद्धांत (Motivation Theory – Maslow – Herzberg)

रुचि प्रेरणा का आधार है।
जब विद्यार्थी किसी विषय में रुचि रखते हैं, तो वे आत्म–प्रेरित होते हैं, और यह प्रेरणा उन्हें बेहतर प्रदर्शन की ओर ले जाती है।

रुचि की कमी ⟶ बाहरी दबाव ⟶ तनाव ⟶ कमजोर प्रदर्शन।

सैद्धांतिक ढाँचे का सार

इन सभी सिद्धांतों के आधार पर निष्कर्ष निकलता है किः

- रुचि ⟶ प्रेरणा ⟶ प्रयास ⟶ संलग्नता ⟶ बेहतर शिक्षण अनुभव ⟶ श्रेष्ठ शैक्षणिक प्रदर्शन।
- रुचि का स्तर संकाय, शिक्षण पद्धति, व्यक्तिगत क्षमताओं और सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है।

- इसलिए शैक्षिक रुचि का अध्ययन कॉलेज स्तर पर अत्यंत आवश्यक है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. कॉलेज छात्रों की शैक्षिक रुचि का स्तर ज्ञात करना।
2. छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन (GPA) का विश्लेषण करना।
3. शैक्षिक रुचि और शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच संबंध का अध्ययन करना।
4. कला, विज्ञान एवं वाणिज्य संकायों के छात्रों की तुलना करना।
5. अध्ययन के आधार पर शिक्षकों एवं संस्थानों के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

साहित्य समीक्षा

1. शैक्षिक रुचि और सफलता

Hidi एवं Renninger (2006) के अनुसार रुचि अधिगम व्यवहार, एकाग्रता तथा दीर्घकालिक स्मृति को बढ़ाती है। उच्च रुचि वाले छात्र कठिन विषयों में भी प्रयास जारी रखते हैं।

2. शैक्षणिक प्रदर्शन के निर्धारक

Roeser एवं Eccles (2015) ने बताया कि शैक्षणिक प्रदर्शन अध्ययन आदतों, आत्म–प्रेरणा, भावनात्मक संतुलन तथा शिक्षक–छात्र संबंधों से प्रभावित होता है।

3. संकाय अनुसार रुचि में अंतर

भारतीय अध्ययनों में पाया गया है कि विज्ञान संकाय के छात्र शोध, प्रयोगशाला गतिविधियों तथा व्यावहारिक अधिगम के कारण उच्च शैक्षिक रुचि प्रदर्शित करते हैंय जबकि कला संकाय के छात्रों में यह अपेक्षाकृत कम पाई जाती है।

4. भारतीय परिप्रेक्ष्य

Sharma (2021) के अध्ययन में पारिवारिक अपेक्षाएँ, प्रतियोगी परीक्षाएँ, सामाजिक दबाव तथा कैरियर लक्ष्यों को छात्रों की रुचि और प्रदर्शन का प्रमुख कारक बताया गया है।

कार्यप्रणाली (Methodology)

अनुसंधान संरचना

वर्णनात्मक सर्वेक्षण पद्धति एवं सहसंबंधात्मक डिजाइन का प्रयोग किया गया।

नमूना

- कुल प्रतिभागी : 150 छात्र

व कला : 50

व विज्ञान : 50

व वाणिज्य : 50

- आयु सीमा : 18–22 वर्ष
- नमूना चयन विधि : स्तरीकृत यादृच्छिक नमूना (Stratified Random Sampling)

उपकरण (Tools Used)

1. शैक्षिक रुचि मापन पैमाना (स्व–निर्मित, 20 बिंदु, Cronbach $\alpha = 0.82$)
2. GPA अभिलेख (कॉलेज के आधिकारिक रिकॉर्ड से)

सांख्यिकीय तकनीकें (Statistical Techniques)

औसत, मानक विचलन, पियरसन सहसंबंध, तथा ANOVAA

डाटा विश्लेषण (Data Analysis)

तालिका 1 : संकायवार शैक्षिक रुचि स्कोर

संकाय	N	औसत रुचि स्कोर	SD
कला	50	62.4	5.6
विज्ञान	50	71.8	6.2
वाणिज्य	50	67.5	5.9

विज्ञान संकाय के छात्रों की शैक्षिक रुचि सर्वाधिक है।

तालिका 2 : संकायवार GPA तुलना

संकाय	औसत GPA	SD
कला	6.8	0.6
विज्ञान	7.6	0.5
वाणिज्य	7.2	0.4

विज्ञान संकाय का शैक्षणिक प्रदर्शन सर्वोत्तम पाया गया।

तालिका 3 : शैक्षिक रुचि एवं GPA के बीच सहसंबंध

चर 1	चर 2	पियरसन r	महत्व
शैक्षिक रुचि	GPA	0.62	$p < 0.01$

दोनों चरों के बीच सकारात्मक व सार्थक सहसंबंध पाया गया।

परिणाम एवं व्याख्या (Results and Discussion)

1. विज्ञान संकाय के छात्रों में शैक्षिक रुचि का स्तर सर्वाधिक, इसके बाद वाणिज्य और कला संकाय के छात्र आते हैं।
2. GPA में भी समान प्रवृत्ति देखी गई–विज्ञान संकाय का प्रदर्शन सर्वोत्तम पाया गया।
3. शैक्षिक रुचि और शैक्षणिक प्रदर्शन के बीच उच्च सकारात्मक सहसंबंध ($r = 0.62$) प्राप्त हुआ, जो यह दर्शाता है कि रुचि में वृद्धि सीधे–सीधे बेहतर शैक्षणिक परिणामों का कारण बनती है।
4. कला संकाय के छात्रों में रुचि कम होने के संभावित कारण–कैरियर अनिश्चितता, कम व्यावहारिक गतिविधियाँ, तथा सामाजिक अपेक्षाएँ हो सकते हैं।
5. अध्ययन यह सुझाव भी देता है कि यदि शिक्षण पद्धतियाँ अधिक रुचिकर और सहभागितापूर्ण हों, तो छात्रों का GPA उल्लेखनीय रूप से बेहतर हो सकता है।

निष्कर्ष

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि कॉलेज के छात्रों की शैक्षिक रुचि उनके शैक्षणिक प्रदर्शन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है। विज्ञान संकाय के छात्रों में रुचि और प्रदर्शन दोनों उच्च पाए गए, जबकि कला संकाय में अपेक्षाकृत कम। अध्ययन यह संकेत देता है कि शिक्षकों को छात्रों में रुचि–विकास हेतु नवीन एवं सक्रिय शिक्षण पद्धतियों का उपयोग करना चाहिए।

शिक्षण संस्थानों को भी रुचि–आधारित गतिविधियों तथा परामर्श सेवाओं को बढ़ावा देना चाहिए ताकि छात्र बेहतर अधिगम परिणाम प्राप्त कर सकें।

सुझाव

1. विषय–आधारित परियोजनाओं एवं गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाए।
2. शिक्षण विधियाँ अधिक व्यावहारिक एवं सहभागितापूर्ण हों।
3. छात्रों को काउंसलिंग के माध्यम से अध्ययन आदतों के बारे में मार्गदर्शन दिया जाए।
4. विभिन्न संकायों में कैरियर–उन्मुख कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
5. छात्रों की रुचि मापने हेतु नियमित मूल्यांकन प्रणाली बनाई जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

Hidi, S., & Renninger, K. A. (2006). The four & phase model of interest development- Educational Psychologist, 41(2), 111–127.

Roeser, R. W., & Eccles, J. S. (2015). Mind, motivation, and meaning in learning. New York: Elsevier.

Sharma, R. (2021). Factors affecting academic interest among Indian college students. Journal of Educational Research, 15(3), 45–52.

Kaur, P., & Koley, S. (2020). Stream & wise differences in academic interest among college students. Indian Journal of Psychology, 28 (1), 72–80.

दृष्टिबाधित एवं सामान्य किशोरों में भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति तथा मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

विनीता कुमारी*
डॉ. गिरिजा उरॉव**

सारांश

वर्तमान शोध का उद्देश्य दृष्टिबाधित और सामान्य किशोरों के बीच भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति तथा मानसिक स्वास्थ्य के अंतर एवं संबंधों का तुलनात्मक विश्लेषण करना है। किशोरावस्था विकास का अत्यंत संवेदनशील चरण है, जहाँ भावनात्मक समर्थन और अभिभावकीय व्यवहार व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को प्रमुख रूप से प्रभावित करते हैं। दृष्टिबाधित किशोर, शारीरिक बाधाओं के कारण अतिरिक्त मनो–सामाजिक चुनौतियों का सामना करते हैं, जिसके कारण उनका मानसिक स्वास्थ्य सामान्य किशोरों से भिन्न हो सकता है।

इस अध्ययन में कुल 200 प्रतिभागियों (100 दृष्टिबाधित एवं 100 सामान्य किशोर) पर मानकीकृत स्केलों के माध्यम से डेटा एकत्र किया गया। परिणामों से ज्ञात हुआ कि दृष्टिबाधित किशोरों को भावनात्मक समर्थन तुलनात्मक रूप से कम प्राप्त हुआ तथा उन्होंने अभिभावकीय अस्वीकृति के अनुभव अधिक बताए। मानसिक स्वास्थ्य के सूचकांकों में भी दोनों समूहों में महत्वपूर्ण अंतर पाया गया। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दृष्टिबाधित किशोरों की भावनात्मक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को समझते हुए परिवार, विद्यालय एवं समाज को अधिक सहयोगात्मक वातावरण प्रदान करने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द : भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति, मानसिक स्वास्थ्य, दृष्टिबाधित किशोर, सामान्य किशोर, तुलनात्मक अध्ययन

भूमिका

किशोरावस्था मानव जीवन का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं संक्रमणकारी चरण है। यह वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति बचपन से वयस्कता की ओर अग्रसर होता है और शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक तथा नैतिक सभी क्षेत्रों में तीव्र परिवर्तन अनुभव करता है। इस आयु में किशोर अपनी पहचान, स्वायत्तता, आत्म–सम्मान और सामाजिक भूमिकाओं के प्रति सजग होते हैं। इसी कारण किशोरावस्था को विकासात्मक मनोविज्ञान में संवेदनशील अवधि (Sensitive Period) कहा गया है। इस समय प्राप्त सकारात्मक या नकारात्मक अनुभव व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसकी भावनात्मक परिपक्वता और मानसिक स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ते हैं।

किशोरावस्था में परिवार और विशेषकर माता–पिता किशोर के भावनात्मक विकास के प्रमुख आधार होते हैं। भावनात्मक समर्थन में अभिभावकों का स्नेह, सहानुभूति, सहयोग, संवाद, प्रोत्साहन और संरक्षा जैसी अनेक मनोवैज्ञानिक गतिविधियाँ शामिल होती हैं। अनेक शोध दर्शाते हैं कि जिन किशोरों को अपने परिवार, अभिभावकों और साथियों से पर्याप्त भावनात्मक समर्थन प्राप्त होता है, वे तनाव सहने की क्षमता, आत्म–सम्मान, आत्म–नियंत्रण और समस्याओं से निपटने में अधिक सशक्त होते हैं। इसके विपरीत भावनात्मक उपेक्षा, अस्वीकृति और नकारात्मक अभिभावकीय व्यवहार किशोरों में आत्म–द्वेष, अवसाद, चिंता, हीनभावना और असामाजिक व्यवहार को जन्म दे सकता है।

दूसरी ओर, दृष्टिबाधित किशोर (Visually Impaired Adolescents) एक विशिष्ट श्रेणी के किशोर हैं, जिनके सामने सामान्य किशोरों की तुलना में अधिक जटिल चुनौतियाँ उपस्थित होती हैं। दृष्टिबाधित किशोर न केवल शारीरिक सीमाओं का अनुभव करते हैं, बल्कि सामाजिक–भावनात्मक अनुकूलन में भी बाधाएँ आती हैं। दृष्टि की कमी उन्हें परिवेश को समझने, सामाजिक संकेतों को पहचानने, संपर्क बनाने, आत्मनिर्भर होने

* शोध छात्रा, मनोविज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
** शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग, रोहतास महिला महाविद्यालय, सासाराम

और अपनी क्षमताओं का उपयोग करने में अतिरिक्त प्रयास करने की स्थिति में डालती है। इस कारण उन्हें अक्सर परिवार, विद्यालय और समाज पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। ऐसी निर्भरता कभी–कभी उनके आत्म–सम्मान, आत्मविश्वास और मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है।

भारत जैसे विकासशील देशों में दृष्टिबाधित किशोरों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण अभी भी पूर्णतः संवेदनशील नहीं हो पाया है। अनेक परिवारों में दृष्टिबाधित बच्चे 'सहानुभूति के पात्र' के रूप में देखे जाते हैं बजाय उनके अधिकारों, क्षमताओं और स्वतंत्रता पर ध्यान देने के। कुछ मामलों में परिवार अधिक संरक्षण (Overprotection) प्रदान करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे में निर्भरता बढ़ती है, जबकि अनेक परिवार संसाधनों की कमी, जानकारी के अभाव और सामाजिक कलंक के कारण उपेक्षा या अस्वीकृति जैसे व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं। इस प्रकार अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति दृष्टिबाधित किशोरों के मनोवैज्ञानिक विकास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण निर्धारक बन जाती है।

Rohner द्वारा प्रतिपादित Parental Acceptance-Rejection Theory (PART) के अनुसार, अभिभावकीय स्वीकृति बच्चों को सुरक्षा, विशेषाधिकार, आत्मविश्वास और सकारात्मक आत्म–छवि प्रदान करती है। इसके विपरीत, अभिभावकीय अस्वीकृति–चाहे वह मौखिक हो, व्यवहारगत हो या भावनात्मक–किशोरों के मनोविज्ञान पर गहरे नकारात्मक प्रभाव छोड़ सकती है। दृष्टिबाधित किशोरों में यह प्रभाव और भी अधिक तीव्र हो सकता है क्योंकि वे स्वयं को पहले से ही अनेक गतिविधियों में सामाजिक रूप से कमजोर स्थिति में पाते हैं।

मानसिक स्वास्थ्य किसी भी किशोर के समग्र विकास का महत्वपूर्ण आधार है। WHO के अनुसार मानसिक स्वास्थ्य केवल मानसिक रोगों का अभाव नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी सकारात्मक अवस्था है जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पहचानता है, तनाव से सफलतापूर्वक निपटता है और समाज में उत्पादक भूमिका निभाता है। दृष्टिबाधित किशोरों में मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ–जैसे चिंता, तनाव, अवसाद, सामाजिक अलगाव, हीनभावना–अनेक अध्ययनों में अधिक पाई गई हैं। इसमें भावनात्मक समर्थन की कमी, अभिभावकीय अस्वीकृति, समाज में सहभागिता की सीमाएँ, तथा शैक्षिक चुनौतियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

सामान्य किशोरों की तुलना में दृष्टिबाधित किशोरों के मनोवैज्ञानिक अनुभव काफी भिन्न हो सकते हैं। जहाँ सामान्य किशोर दृश्य सूचनाओं, सामाजिक संकेतों और पर्यावरणीय समझ के आधार पर स्वयं को अनुकूलित कर लेते हैं, वहीं दृष्टिबाधित किशोरों को इन्हीं चीजों के लिए अधिक प्रयास करना पड़ता है। इससे उनके व्यक्तिगत, सामाजिक और शैक्षिक अनुभवों में विविधता आती है। इसलिए दोनों समूहों के बीच भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति और मानसिक स्वास्थ्य के तुलनात्मक अध्ययन की वैज्ञानिक एवं सामाजिक आवश्यकता स्पष्ट रूप से समझ में आती है।

समस्या का औचित्य

हालाँकि दृष्टिबाधित व्यक्तियों पर कई शोध हुए हैं, किंतु किशोरावस्था की संवेदनशील अवधि, अभिभावकीय व्यवहार और भावनात्मक समर्थन के संयुक्त प्रभाव पर तुलनात्मक अध्ययन बहुत कम उपलब्ध हैं। विशेषकर भारतीय संदर्भ में, जहाँ सामाजिक–आर्थिक विषमता, पारिवारिक संरचना और सांस्कृतिक मूल्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इस प्रकार का अध्ययन और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। यह शोध न केवल दृष्टिबाधित किशोरों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पहचान करेगा, बल्कि परामर्शदाताओं, शिक्षकों, नीति–निर्माताओं और परिवारों के लिए उपयोगी दिशा भी प्रदान करेगा।

अध्ययन के उद्देश्य

1. दृष्टिबाधित और सामान्य किशोरों के भावनात्मक समर्थन में अंतर का विश्लेषण करना।
2. दृष्टिबाधित और सामान्य किशोरों में अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति के स्तर की तुलना करना।
3. दोनों समूहों के मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. भावनात्मक समर्थन, अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य संबंधों का विश्लेषण करना।
5. दृष्टिबाधित किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख मनो–सामाजिक कारकों की पहचान करना।

साहित्य समीक्षा

1. भावनात्मक समर्थन और युवा विकास

कई शोध दर्शाते हैं कि परिवार एवं मित्रों का भावनात्मक समर्थन किशोरों के आत्मसम्मान, समस्या–समाधान कौशल तथा तनाव–सहन शक्ति को बढ़ाता है। (Steinberg, 2014).

2. दृष्टिबाधित किशोरों की चुनौतियाँ

दृष्टिबाधित किशोर सामाजिक एकाकीपन और आत्म–सम्मान की कमी का सामना करते हैं, जिससे उनका मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है (Sahani, 2018).

3. अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति का प्रभाव

त्वीदमत (2004) के अनुसार अभिभावकीय अस्वीकृति बच्चों में भावनात्मक अव्यवस्था और असुरक्षा उत्पन्न करती है। दृष्टिबाधित किशोरों के माता–पिता अक्सर अत्यधिक सुरक्षा या उपेक्षा का व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं।

4. मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक दृष्टिकोण

अनेक शोध इंगित करते हैं कि शारीरिक या संवेदी विकलांगता वाले किशोरों में चिंता, अवसाद व व्यवहारगत समस्याएँ सामान्य किशोरों से अधिक होती हैं (WHO, 2019).

कार्यप्रणाली (Methodology)

अनुसंधान रूपरेखा :

वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक सर्वेक्षण पद्धति का उपयोग किया गया।

नमूना :

कुल 200 प्रतिभागी–

- 100 दृष्टिबाधित किशोर (14–18 वर्ष)
- 100 सामान्य किशोर

नमूना चयन पद्धतिः

स्तरीकृत यादृच्छिक नमूना (Stratified Random Sampling)

मापन उपकरण (Tools):

1. Emotional Support Scale
2. Parental Acceptance-Rejection Questionnaire (PARQ) – Rohner
3. General Mental Health Scale

डेटा विश्लेषणः

- Mean, SD
- t-test
- Pearson correlation

डाटा विश्लेषण (Data Analysis)

तालिका 1: भावनात्मक समर्थन में अंतर

समूह	Mean	SD	t–value
दृष्टिबाधित	48.2	6.8	5.42
सामान्य	55.9	7.1	

परिणामः अंतर महत्वपूर्ण ($p < .01$)

तालिका 2: अभिभावकीय स्वीकृति–अस्वीकृति

समूह	Acceptance Mean	Rejection Mean	t–value
दृष्टिबाधित	42.3	58.4	4.89
सामान्य	51.7	46.2	

तालिका 3: मानसिक स्वास्थ्य स्कोर

समूह	Mean	SD	t–value
दृष्टिबाधित	41.6	8.2	6.12
सामान्य	52.4	7.5	

सहसंबंध (Correlation):

- भावनात्मक समर्थन ↔ मानसिक स्वास्थ्य = 0.62
- अभिभावकीय अस्वीकृति ↔ मानसिक अस्वस्थता = 0.71

परिणाम एवं व्याख्या

1. दृष्टिबाधित किशोरों को भावनात्मक समर्थन कम प्राप्त हुआ, जो साहित्य से मेल खाता है।
2. अभिभावकीय अस्वीकृति का स्तर दृष्टिबाधित किशोरों में अधिक पाया गया। यह परिणाम बताता है कि परिवार में कभी–कभी अतिरिक्त निर्भरता या उपेक्षा का माहौल बन जाता है।
3. मानसिक स्वास्थ्य के सूचकांकों पर दोनों समूहों में स्पष्ट अंतर मिला। दृष्टिबाधित किशोरों में चिंता, तनाव और अवसाद की प्रवृत्ति अधिक पाई गई।
4. भावनात्मक समर्थन और मानसिक स्वास्थ्य के बीच धनात्मक सहसंबंध दर्शाता है कि उचित समर्थन मानसिक स्वास्थ्य को मजबूत बनाता है।
5. अभिभावकीय अस्वीकृति ने मानसिक अस्वस्थता को बढ़ाया, जो च।त्ज् जैमवतल के अनुरूप है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि दृष्टिबाधित किशोर भावनात्मक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक चुनौतियों का अधिक सामना करते हैं। उन्हें सामान्य किशोरों की तुलना में कम भावनात्मक समर्थन मिलता है, अभिभावकीय अस्वीकृति की अनुभूति अधिक होती है तथा मानसिक स्वास्थ्य के स्तर कम पाए गए।

अतः आवश्यकता है कि परिवार, विद्यालय और समाज दृष्टिबाधित किशोरों को अधिक स्वीकार्यता, सहयोग एवं भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करें।

सुझाव

1. दृष्टिबाधित किशोरों के लिए विद्यालयों में काउंसलिंग सुविधाएँ अनिवार्य की जाएँ।
2. अभिभावकों हेतु Parent Education Programs आयोजित हों।
3. समुदाय में सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाएँ।
4. दृष्टिबाधित किशोरों के लिए सामाजिक सहभागिता गतिविधियाँ बढ़ाई जाएँ।
5. सरकार को विशेष मानसिक स्वास्थ्य समर्थन योजनाएँ प्रारंभ करनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

Rohner, R. P. (2004). The parental acceptance-rejection syndrome. American Psychologist, 59(8), 830–840.

Sahani, R. (2018). Psychosocial challenges among visually impaired adolescents. Indian Journal of Psychology, 12(3), 44–51.

Steinberg, L. (2014). Age of opportunity: Lessons from the new science of adolescence. Houghton Mifflin Harcourt.

World Health Organization. (2019). Adolescent mental health: Key facts. WHO Publications.

Sharma, P., & Goyal, M. (2020). Emotional support and mental health among differently-abled youth. Journal of Social Sciences, 18(2), 90–101.

Kumar, V., & Singh, A. (2017). Parental acceptance-rejection and psychological well-being. Indian Journal of Mental Health, 24(1), 52–63.

मलिन बस्तियों के परिवारों में जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन एवं प्रतिबल (Resilience) के मध्य संबंधः एक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

रागिनी कुमारी*
डॉ. गिरिजा उरॉव**

सारांश

मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवार अनेक सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करते हैं, जो उनकी जीवन–गुणवत्ता, मानसिक स्वास्थ्य और जीवन–व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। इस शोध का उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवारों के संदर्भ में जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन और प्रतिबल (Resilience) के बीच क्या संबंध है। कुल 200 प्रतिभागियों (100 पुरुष और 100 महिलाओं) पर जीवन–गुणवत्ता स्केल, सामाजिक समर्थन स्केल और प्रतिबल मापन सूचकांक का उपयोग करके डेटा एकत्र किया गया। परिणामों से स्पष्ट हुआ कि जिन परिवारों में सामाजिक समर्थन अधिक था, वे जीवन–गुणवत्ता में भी उच्च पाए गए तथा उनमें संकटों का सामना करने की क्षमता अर्थात् प्रतिबल का स्तर भी अधिक था। इसके विपरीत जिन परिवारों में सामाजिक, सामुदायिक और पारिवारिक समर्थन सीमित था, उन्हें अधिक तनाव, कम जीवन–गुणवत्ता तथा घटते प्रतिबल का अनुभव हुआ। निष्कर्षतः सामाजिक समर्थन जीवन–गुणवत्ता एवं प्रतिबल का महत्त्वपूर्ण भविष्यवक्ता पाया गया। इस शोध के निष्कर्ष नीति–निर्माताओं, मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों तथा सामुदायिक संगठनों को मलिन बस्तियों के जीवन–विकास हेतु दिशा–निर्देश प्रदान कर सकते हैं।

मुख्य शब्द : मलिन बस्ती, जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन, प्रतिबल (Resilience), मानसिक स्वास्थ्य, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, आर्थिक वंचना, सामुदायिक समर्थन।

भूमिका

शहरीकरण आधुनिक युग के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का सबसे सशक्त संकेतक माना जाता है। विश्वभर में विशेषकर भारत जैसे विकासशील देशों में तीव्र शहरी वृद्धि और जनसंख्या दबाव के परिणामस्वरूप मलिन बस्तियों का विस्तार एक गंभीर सामाजिक चुनौती के रूप में सामने आया है। मलिन बस्तियाँ केवल भौतिक रूप से अविकसित आवासीय क्षेत्र नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक विषमता, आर्थिक वंचना, असुरक्षा, अस्वच्छता, संसाधनों की कमी और सीमित अवसरों का जटिल मिश्रण प्रस्तुत करती हैं। इन क्षेत्रों में रहने वाले परिवारों का जीवन निरंतर अनिश्चितताओं और संघर्षों से घिरा होता है, जो उनके मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक व्यवहार और मनोवैज्ञानिक क्षमताओं को गहरे रूप से प्रभावित करता है।

जीवन–गुणवत्ता (Quality of Life) एक समग्र अवधारणा है, जिसमें शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्थिति, सामाजिक संबंध, परिवेश से संतुष्टि, आर्थिक स्थिरता और व्यक्तिगत सुरक्षा जैसे अनेक आयाम सम्मिलित होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार जीवन–गुणवत्ता वह अनुभव है जो व्यक्ति अपने जीवन की परिस्थितियों को अपनी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, मूल्य प्रणाली, अपेक्षाओं और लक्ष्यों के संदर्भ में करता है। मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवारों की जीवन–गुणवत्ता आमतौर पर निम्न पाई जाती है क्योंकि उन्हें स्वच्छ जल, स्वास्थ्य सेवाएँ, सुरक्षित आवास, शिक्षा, पोषण और रोजगार जैसी मूलभूत सुविधाएँ भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होतीं। इसके अलावा, अस्थिर आय, अत्यधिक जनसंख्या घनत्व, पर्यावरणीय जोखिम और सामाजिक उपेक्षा इनके जीवन को और अधिक कठिन बनाते हैं।

इसी संदर्भ में सामाजिक समर्थन (Social Support) एक अत्यंत महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक कारक के रूप में उभरता है। सामाजिक समर्थन में परिवार, मित्र, पड़ोसी, सामुदायिक संस्थाएँ तथा सरकारीध्गैर–सरकारी संगठनों का सहयोग शामिल होता है, जो व्यक्ति को भावनात्मक, सामग्री, सूचनात्मक

* शोध छात्रा, मनोविज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
** शोध निर्देशक, विभागाध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग, रोहतास महिला महाविद्यालय, सासाराम, रोहतास

तथा व्यावहारिक सहायता प्रदान करते हैं। अनेक अनुसंधानों में यह सिद्ध हुआ है कि सामाजिक समर्थन व्यक्ति के तनाव स्तर को कम करता है, मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करता है और जीवन–गुणवत्ता को बेहतर बनाता है। मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवारों के लिए यह समर्थन और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि वे विभिन्न सामाजिक–आर्थिक समस्याओं से अकेले निपटने की क्षमता में कमी महसूस करते हैं।

इसके साथ ही, प्रतिबल (Resilience) वह मनोवैज्ञानिक शक्ति है जो व्यक्ति को विपरीत परिस्थितियों, कठिनाइयों और संकटों का सामना करने में सक्षम बनाती है। प्रतिबल केवल जन्मजात क्षमता नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के अनुभवों, सामाजिक परिवेश, सीखने की प्रक्रिया और उपलब्ध समर्थन प्रणाली द्वारा विकसित होता है। प्रतिबल व्यक्ति को भावनात्मक संतुलन बनाकर रखने, नई परिस्थितियों के अनुरूप ढलने तथा आंतरिक मजबूती बनाए रखने में सहायता करता है। विशेषकर मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवारों के लिए प्रतिबल एक संरक्षक (Protective Factor) की तरह कार्य करता है, क्योंकि कठिन परिस्थितियों और संसाधनों की कमी के बावजूद उन्हें जीवित रहने और जीवन को आगे बढ़ाने की चुनौती का प्रतिदिन सामना करना पड़ता है।

इन तीनों अवधारणाओं–जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन और प्रतिबल–के बीच घनिष्ठ संबंध देखा जाता है। शोध दर्शाते हैं कि सशक्त सामाजिक समर्थन मिलने पर व्यक्ति का प्रतिबल बढ़ता है, और जब प्रतिबल अधिक होता है तो व्यक्ति कठिन परिस्थितियों को प्रभावी ढंग से संभाल पाता है, जिससे उसकी जीवन–गुणवत्ता स्वाभाविक रूप से बेहतर होती है। इसके विपरीत, यदि सामाजिक समर्थन कमजोर होता है, तो व्यक्ति का प्रतिबल घटता है, और वह तनाव, चिंता, अवसाद तथा असंतोष जैसी नकारात्मक मानसिक अवस्थाओं का अनुभव करने लगता है। मलिन बस्तियों की जीवन–स्थितियों को देखते हुए यह संबंध और भी स्पष्ट तथा महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

भारत की मलिन बस्तियों में ऐसी परिस्थितियाँ अत्यधिक सामान्य हैं–जैसे निम्न आय, अस्थायी रोजगार, भीड़भाड़ वाले रहने के स्थान, अस्वच्छ जल व वायु, कुपोषण, स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, सामाजिक भेदभाव, शिक्षा–अवसरों का अभाव, नशाखोरी का प्रचलन और अपराध का जोखिम। ये सभी कारक परिवारों के मानसिक और सामाजिक जीवन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं। ऐसी परिस्थितियों में यदि परिवारों को उचित सामाजिक समर्थन या सामुदायिक सहयोग नहीं मिल पाता, तो उनका प्रतिबल कमजोर हो जाता है, और वे जीवन की कठिनाइयों का सामना करने में और अधिक असहाय महसूस करते हैं।

इस शोध का उद्देश्य इन मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आयामों के बीच संबंध का गहन अध्ययन करना है। विशेषकर यह समझना आवश्यक है कि मलिन बस्तियों के परिवारों की जीवन–गुणवत्ता को बेहतर बनाने में सामाजिक समर्थन कितना महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और किस प्रकार प्रतिबल जीवन की कठिन परिस्थितियों को संभालने में उनकी सहायता करता है। यह शोध एक मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल मलिन बस्तियों के जीवन की वास्तविकताओं को उजागर करता है, बल्कि यह भी बताता है कि किन कारकों को सशक्त बनाकर इनके जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, यह अध्ययन नीति–निर्माताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं, मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों तथा NGOs के लिए अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि इसके निष्कर्षों के आधार पर मलिन बस्तियों की जीवन–स्थितियों में वास्तविक सुधार लाने की रणनीतियाँ विकसित की जा सकती हैं। सामाजिक समर्थन तंत्र को मजबूत करना, सामुदायिक कार्यक्रमों का विस्तार, मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, तथा आर्थिक–सामाजिक सशक्तिकरण जैसी पहलें सीधे तौर पर जीवन–गुणवत्ता और प्रतिबल को बढ़ा सकती हैं।

इस प्रकार यह शोध केवल सैद्धांतिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से भी अत्यंत सार्थक एवं आवश्यक है। यह मलिन बस्ती के परिवारों की संघर्षपूर्ण वास्तविकताओं को समझने, उनकी मानसिक शक्ति को पहचानने और उनके जीवन को बेहतर बनाने हेतु वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक आधार प्रदान करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवारों की जीवन–गुणवत्ता के स्तर का मूल्यांकन करना।
2. इन परिवारों में सामाजिक समर्थन के प्रकार एवं स्तर को निर्धारित करना।
3. परिवारों के प्रतिबल (Resilience) के स्तर का विश्लेषण करना।
4. जीवन–गुणवत्ता और सामाजिक समर्थन के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

5. सामाजिक समर्थन और प्रतिबल के मध्य संबंध का अध्ययन करना।
6. जीवन–गुणवस्था एवं प्रतिबल के मध्य पारस्परिक संबंधों का विश्लेषण करना।
7. यह समझना कि सामाजिक समर्थन जीवन–गुणवत्ता और प्रतिबल का किस प्रकार भविष्यवक्ता (Predictor) के रूप में कार्य करता है।

साहित्य समीक्षा

1. जीवन–गुणवत्ता के संदर्भ में अध्ययन

WHO के अनुसार जीवन–गुणवत्ता व्यक्ति के स्वास्थ्य, भावनात्मक स्थिति, स्वतंत्रता, सामाजिक संबंधों और पर्यावरणीय संदर्भों का सम्मिलित परिणाम है। गरीबी और वंचनापूर्ण क्षेत्रों में जीवन–गुणवत्ता अत्यंत निम्न पाई जाती है। Kumar – Singh (2017) के अनुसार मलिन बस्तियों में रहने वाले परिवार आर्थिक असुरक्षा और पर्यावरणीय जोखिमों के कारण जीवन–गुणवत्ता में पीछे रहते हैं।

2. सामाजिक समर्थन पर पूर्व शोध

House (1981) ने बताया कि सामाजिक समर्थन व्यक्ति के तनाव को कम करता है और मनोवैज्ञानिक कल्याण बढ़ाता है। Indian Urban Poverty Report (2010) बताता है कि मलिन बस्तियों में गैर–औपचारिक सामाजिक नेटवर्क परिवारों के लिए महत्वपूर्ण संसाधन हैं।

3. प्रतिबल (Resilience) के सिद्धांत

Masten (2001) के अनुसार प्रतिबल एक सामान्य मनोवैज्ञानिक क्षमता है जो कठिन परिस्थितियों में व्यक्ति को अनुकूलन के लिए सक्षम बनाती है। यह सामाजिक, भावनात्मक तथा संज्ञानात्मक संसाधनों पर आधारित होती है। अनुसंधान में पाया गया है कि सामाजिक समर्थन प्रतिबल का मुख्य आधार है।

4. तीनों अवधारणाओं के मध्य संबंध

बहुत से अध्ययनों में यह पाया गया है कि

- सामाजिक समर्थन जीवन–गुणवत्ता को बढ़ाता है,
- उच्च प्रतिबल तनाव से निपटने की क्षमता बढ़ाता है,
- और सामाजिक समर्थन प्रतिबल को मजबूत करता है।

India में Chandrasekhar (2019) के अध्ययन ने स्पष्ट किया कि मलिन बस्तियों के परिवारों में सामाजिक समर्थन प्रतिबल का सबसे मजबूत भविष्यवक्ता है।

कार्यप्रणाली (Methodology)

अनुसंधान डिजाइनः वर्णनात्मक एवं सहसंबंधी (Descriptive – Correlational)
सैंपलः 200 प्रतिभागी (25–50 वर्ष आयु वर्ग)
क्षेत्रः शहरी मलिन बस्तियाँ
सैम्पल तकनीकः यादृच्छिक नमूना चयन (Random Sampling)

उपकरणः

1- WHO–QOL Life Quality Scale
2- Multidimensional Social Support Scale
3- Connor-Davidson Resilience Scale

सांख्यिकीय तकनीकः

- प्रतिशत
- माध्य व मानक विचलन
- सहसंबंध (Correlation)
- रिग्रेशन विश्लेषण (Regression)

डाटा विश्लेषण (Data Analysis)

- जीवन–गुणवत्ता का औसत स्कोरः मध्यम से निम्न स्तर
- सामाजिक समर्थन का औसत स्कोरः मध्यम स्तर
- प्रतिबल का औसत स्कोरः: मध्यम से निम्न
- सामाजिक समर्थन और जीवन–गुणवत्ता के बीच उच्च सहसंबंध ($r = .62$)
- सामाजिक समर्थन और प्रतिबल के बीच सकारात्मक सहसंबंध ($r = .71$)
- जीवन–गुणवत्ता और प्रतिबल के बीच मध्यम सहसंबंध ($r = .55$)

- रिग्रेशन विश्लेषण सेः सामाजिक समर्थन जीवन–गुणवत्ता का 42% और प्रतिबल का 53% तक भविष्यवक्ता पाया गया।

परिणाम एवं व्याख्या (Results & Interpretation)

अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि जिन परिवारों में सामाजिक समर्थन अधिक है, वे तनावपूर्ण परिस्थितियों के बावजूद उच्च जीवन–गुणवत्ता का अनुभव करते हैं। सामुदायिक जुड़ाव, पड़ोसियों का सहयोग, पारिवारिक सहभागिता और सरकारी सहायता प्रतिबल को बढ़ाती है।

कम सामाजिक समर्थन वाले परिवार अधिक मानसिक तनाव, असुरक्षा, कम आत्मविश्वास और जीवन–गुणवत्ता में गिरावट का अनुभव करते हैं। निष्कर्षतः यह पाया गया कि सामाजिक समर्थन मलिन बस्ती परिवारों के मानसिक स्वास्थ्य के लिए सबसे महत्वपूर्ण घटक है।

निष्कर्ष

यह अध्ययन दर्शाता है कि मलिन बस्तियों के परिवारों की जीवन–गुणवत्ता, सामाजिक समर्थन और प्रतिबल एक–दूसरे से अत्यधिक जुड़े हुए हैं। सामाजिक समर्थन एक संरक्षक कारक (Protective Factor) की तरह कार्य करता है, जो न केवल जीवन–गुणवत्ता को सुधारता है बल्कि प्रतिबल को भी मजबूत करता है। इसलिए मलिन बस्तियों में सामाजिक, सामुदायिक तथा शासन–स्तरीय पहल अत्यंत आवश्यक हैं।

सुझाव

1. मलिन बस्तियों में सामुदायिक नेटवर्क एवं सामाजिक समूहों को मजबूत किया जाए।
2. परिवारों को मनोवैज्ञानिक परामर्श एवं मानसिक स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराई जाएँ।
3. सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठनों द्वारा सामाजिक समर्थन कार्यक्रम चलाए जाएँ।
4. युवाओं एवं महिलाओं के लिए कौशल–विकास एवं रोजगार कार्यक्रम शुरू किए जाएँ।
5. स्वास्थ्य, स्वच्छता और आवासीय स्थितियों में सुधार लाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

Chandrasekhar, S. (2019). Social support systems and wellbeing among urban slum families in India. Journal of Community Psychology, 47(8), 1950–1963. https://doi.org/10.1002/jcop.22212

Connor, K. M., & Davidson, J. R. T. (2003). Development of a new resilience scale: The Connor–Davidson Resilience Scale (CD-RISC). Depression and Anxiety, 18(2), 76–82. https://doi.org/10.1002/da.10113

House, J. S. (1981). Work stress and social support. Addison & Wesley.

Kumar, R., & Singh, H. (2017). Quality of life in Indian urban slums: Socioeconomic constraints and psychological implications. Indian Journal of Social Science Research, 14(3), 22–37.

Masten, A. S. (2001). Ordinary magic: Resilience processes in development. American Psychologist, 56(3), 227–238. https://doi.org/10.1037/0003-066X.56.3.227

Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation. (2010). India urban poverty report 2009. Oxford University Press.

World Health Organization, (1995). The World Health Organization Quality of Life assessment (WHOQOL): Position paper from the World Health Organization- Social Science & Medicine, 41(10), 1403–1409.

World Health Organization, (2012). WHOQOL user manual (Rev. ed. WHO Press). https://apps-who-int/iris/handle/10665/77932

Zimet, G. D., Dahlem, N. W., Zimet, S. G., & Farley, G. K. (1988). The Multidimensional Scale of Perceived Social Support. Journal of Personality Assessment, 52(1), 30–41. https://doi.org/10.1207/s15327752jpa5201_2

रायगढ़ दरबार में संरक्षण प्राप्त प्रसिद्ध तबला वादक एवं उनकी रचनाएँ (उ. मुनीर खां, उ. कादिर बख्श, उ. नत्थू खां के विशेष सन्दर्भ में)

किशन दास महंत*
डॉ. हरिओम हरि**

सारांश

रायगढ़ दरबार में संरक्षण प्राप्त कलाकारों का रायगढ़ के तबला परंपरा में विशेष योगदान रहा है | इनसे रायगढ़ दरबार के तबला वादकों ने समय - समय पर तबले की शिक्षा प्राप्त की | देश के विभिन्न ख्याति प्राप्त तबला वादकों को रायगढ़ दरबार में संरक्षण प्राप्त था | रायगढ़ के राजा चक्रधर सिंह को सरंक्षण प्राप्त संगीतज्ञों ने भेंट स्वरुप अनेकों बहुमूल्य रचनाएँ प्रदान की तथा दरबार में विभिन्न नई रचनाएँ की | राजा चक्रधर सिंह ने तालतोयनिधि, तालबल पुष्पाकर, मुरजपर्ण पुष्पाकर आदि विभिन्न ग्रंथों की रचना की जिसमे तबला के गुरुओं द्वारा प्राप्त विभिन्न बहुमूल्य रचनाओं को संमिलित किया |

महत्वपूर्ण शब्द - तबला, तबला की रचनाएँ, रायगढ़ दरबार, राजा चक्रधर सिंह, उ. मुनीर खां, उ. कादिर बख्श, उ. नत्थू खां |

परिचय - राजा चक्रधर सिंह प्रतिभा संपन्न , कवि , रंगकर्मी ,नाट्य लेखक अपने युग के श्रेष्ठ तबला वादक और जन्म जात नर्तक थे | राजा चक्रधर सिंह ने संगीत कला के विकास के लिए कई कार्य किये | जिससे संगीत कला का अत्यधिक प्रचार - प्रसार हुआ और जिससे संगीत कला विकास की ओर अग्रसर होने लगा | उनके अनेको कार्यों में से एक महान कार्य यह था कि उन्होंने तबला एवं पखावज के गुरु एवं उस्तादों को रायगढ़ दरबार में आमंत्रित किया तथा उन्हें राज दरबार में संरक्षण दिया और रायगढ़ रियासत के अनेकों शिक्षार्थियों को उन महान गुरुओं से तबला एवं पखावज की शिक्षा दिलवाई |

राजा मदन सिंह ने छत्तीसगढ़ के रायगढ़ रियासत की नींव डाली | क्रमशः तखत सिंह, बेद सिंह, दिलीप सिंह, जुझारू सिंह, घनश्याम सिंह, भूपदेव सिंह, चक्रधर सिंह तथा ललित सिंह राजा मदन सिंह के वंश परंपरा में हुए जिन्होंने राजगद्दी संभाली |[1]

डॉ. अबान ई मिस्त्री की पुस्तक पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराएँ में उन्होंने रायगढ़ दरबार में संरक्षण प्राप्त तबला एवं पखावज वादकों का उल्लेख इस प्रकार किया है उस्ताद कादिर बख्श खाँ, उ० मलंग खाँ, उ० करम इलाही खाँ, (पंजाब), उ० गुलाब हुसेन खाँ, खलीफा नत्थू खाँ (दिल्ली), उ० मुनीर खाँ (मुम्बई), उ० अजीम बख्श, उ० फिरोज खाँ दिल्ली वाले, उ० कादिर बख्श के शिष्य उ० सादिक हुसेन, उ० हबीबुद्दीन खाँ (मेरठ), श्री कृपाराम खास (रायगढ़), उ० अहमद जान थिरकया, उ० जमाल खाँ, उ० भूरजी खाँ (इन्दौर), उ० अमीर हुसेन खौं (मुम्बई), उ० कल्लू खाँ तथा अनुजराम मालाकार आदि तबलावादक, पं० शोभा राम अय्यर (कोयंबतूर) जैसे घटम् वादक, तथा ठाकुर लक्ष्मण सिंह, पं० सखाराम, पं० शम्भू प्रसाद पखावजी (बाँदा) श्री रामदास जी (मुम्बई), ठाकुर जगदीश सिंह 'दीन', श्री कृष्णदास पखावजी, पं० वासुदेव पखावजी आदि पखावज वादक उनके दरबार को शोभायमान करते थे |[2]

रायगढ़ दरबार में सरंक्षण प्राप्त संगीतज्ञों में विशेष उ. मुनीर खां, उ. कादिर बख्श, उ. नत्थू खां की जीवनवृत्त और इनके द्वारा राजा चक्रधर सिंह को भेंट स्वरुप दी गई कुछ महत्वपूर्ण रचनाएँ-

* शोधार्थी, अवनद्ध वाद्य विभाग, इं.क.सं. विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ.ग.)
** शोध निर्देशक, अवनद्ध वाद्य विभाग, इं.क.सं. विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ.ग.)

उ. मुनीर खां

मेरठ के ललियाना ग्राम के एक संगीतज्ञ परिवार में उस्ताद मुनीर खाँ का जन्म सन् 1863 ई. में हुआ | इनके पिता का नाम काले खाँ था, जो कि बम्बई में रहते थे | आपने चौबीस उस्तादों से तबले की शिक्षा ग्रहण की ऐसा आपकी शिक्षा के बारे में कहा जाता है | 15 से 23 वर्ष की आयु तक तबले की शिक्षा आपने फ़र्रुखाबाद घराने के उस्ताद हाजी विलायत अली खाँ साहब के पुत्र उस्ताद हुसैन अली से प्राप्त की | इसके पश्चात् लगभग दस से बारह वर्षों तक दिल्ली घराने के उस्ताद नत्थू खाँ के पिता उस्ताद बोली बख्श से शिक्षा प्राप्त की | फिर उस्ताद नज़र अली खाँ से भी तालीम हासिल किया तथा नासीर खाँ पखावजी से भी शिक्षा प्राप्त की | देश भ्रमण कर इस प्रकार उस्ताद मुनीर खाँ साहब ने उस्तादों से भरपूर विद्या ग्रहण किया |

आप एक अच्छे वादक के साथ-साथ अच्छे गुरु भी थे | आपका एक मात्र पुत्र का नाम हिदायत खाँ था, जो कि एक उत्कृष्ट तबलावादक थे, जिनका निधन युवावस्था में ही हो गया | आपके शिष्यों में उस्ताद अहमद जान 'थिरकवा', उस्ताद अमीर हुसैन खाँ (भानजे), हिदायत खाँ (पुत्र), समसुद्दीन खाँ, गुलाम हुसैन खाँ (पुत्र), निखिल घोष, उस्ताद हबीबुद्दीन खाँ आदि उल्लेखनीय हैं | उस्ताद मुनीर खाँ का अधिकांश जीवन बम्बई एवं हैदराबाद में व्यतीत हुआ | जीवन के संध्याकाल में आप रायगढ़ (छ.ग.) के राजा चक्रधर सिंह के दरबार में सभासद हो गये | उस्ताद मुनीर ख़ाँ का निधन 11 सितम्बर 1938 ई. को रायगढ़ में ही हो गया |[3]

राजा चक्रधर सिंह को भेंट स्वरुप दी गई प्रमुख रचनाएँ –

उस्ताद मुनीर खां द्वारा राजा चक्रधर सिंह को प्रदत्त कायदा श्री वेदमणि सिंह ठाकुर द्वारा प्राप्त पाण्डुलिपि का छायाप्रति संलग्न त्रिताल 16 मात्रा

दिल्ली घराने के उस्ताद मुनीर खाँ द्वारा प्राप्त

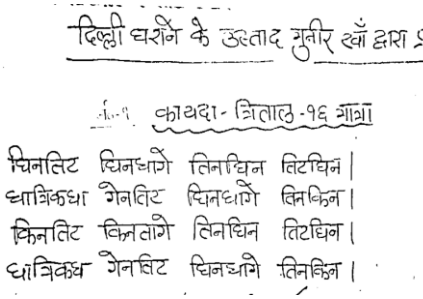

कायदा - त्रिताल - १६ मात्रा

धिनतिट धिनधागे तिनधिन तिटधिन |
धात्रिकधा गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
किनतिट किनतागे तिनधिन तिटधिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

क़ायदा

धिनतिट धिनधागे तिनधिन तिटधिन | धात्रिकधा गेनातिट धिनधागे तिनकिन |
किनतिट किनतागे तिनधिन तिटधिन | धात्रिकधा गेनातिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 1

धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
धिनतिट धिनधागे तिनधीन तितघिन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
तात्रिकत गेनतिट किनतागे तिनकिन | तात्रिकता गेनतिट किनतागे तिनकिन |
धिनतिट धिनधागे तिनधिन तिटधिन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 2

धिनधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन | धिनधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
तिनकिन तिटकिन ता sकिन तिटकिन । धिनधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 3

धात्रिकधा गेनतिट धिनधात्रि कधागेन | घात्रिकधा गेनतिट धिनधात्रि कधागेन |
धात्रिकधा गेनतिट धिनधात्रि कधागेन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
तात्रिकता गेनतिट किनतात्रि कतागेन | घात्रिकधा गेनतिट धिनधात्रि कधागेन |
धात्रिकधा गेनतिट धिनधात्रि कधागेन । धात्रिकधा गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 4

घाऽधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन | घाऽधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
ताऽधिन तिटकिन ताऽकिन तिटकिन | घाऽधिन तिटधिन धाऽधिन तिटधिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 5

धाऽधिन तिटधिन घाधाधिन तिटधिन | घात्रिकधा गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
ताऽकिन तिटकिन ताताकिन तिटकिन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | घात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

पलटा- 6

घाऽधिन तिटधिन घाघाधिन तिटधिन | घाऽधिन तिटधिन धाधाधिन तिटधिन |
धाऽधिन तिटधिन घाधाधिन तिटधिन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |
ताऽधिन तिटकिन ताताकिन तिटकिन | घाऽधिन तिटधिन धाधाधिन तिटधिन |
धाऽधिन तिटधिन घाधाधिन तिटधिन | धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन |

तिहाई

धात्रिकध गेनतिट धिनधागे तिनकिन | धाधाधिन धाऽधात्रि कधागेन तिटधिन |
धागेतिन किनधाधा धिनधाऽ घात्रिकध | गेनतिट धिनधागे तिनकिन धाधाधिन |धा[4]

उ. कादिर बख्श

मियाँ कादिर बख्श तबले के पंजाब घराने के प्रसिद्ध कलाकार का जन्म अविभाजित भारत में सन् 1902 के लगभग लाहौर में हुआ था, जो अब पाकिस्तान में है | इनके पिता मियाँ फकीर बख्श अपने समय के ख्याति प्राप्त पखावज-वादक थे | कादिर बख्श ने अपने पिता से और उनके देहान्त के पश्चात् पिता के योग्य शिष्य उस्ताद करमाइलाही से तबला और पखावज दोनों की शिक्षा प्राप्त की |

उस्ताद कादिर बख्श लयकारी और ताल विद्या के काम में दक्ष थे | आप सभी कार्य बांयें हाथ से करते थे | आपने अपने समय में खूब ख्याति अर्जित की | भारत के विभाजन के बाद इन्होने पाकिस्तान की नागरिकता स्वीकार कर ली | आपके शिष्यों का एक बड़ा समूह है, जिसमें कुछ मुख्य नाम हैं- रायगढ़ के महाराज चक्रधर सिंह जू देव, महाराज टीकमगढ़ (मध्य प्रदेश) और चोटी के कलाकार पद्मश्री उस्ताद अल्लारक्खा (मुंबई) है | आपका निधन लाहौर (पाकिस्तान) में हो गया |[5]

उस्ताद कादिर बख्श द्वारा राजा चक्रधर सिंह को प्रदत्त कायदा श्री वेदमणि सिंह ठाकुर द्वारा प्राप्त पाण्डुलिपि का छायाप्रति संलग्न त्रिताल 16 मात्रा

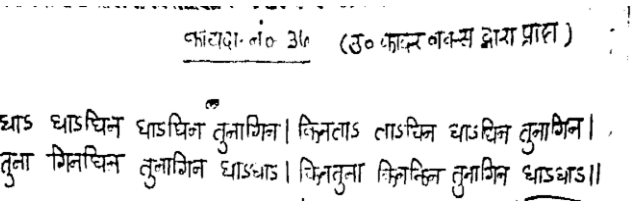

क़ायदा

धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन | किनता धाऽधिन ताऽघिन तुनागिन |
धिनतुना गिनधिन तुनागिन धाऽधाऽ | किनतुना किनकिन तुनागिन घाऽधाऽ |

पलटा- नं 1

धिनधाऽ धाऽधिन घाऽधिन तुनागिन | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
किनताऽ ताऽकिन ताऽकिन तुनागिन | घिनघा धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

पलटा- नं 2

घिनधाऽ घाऽधिन धाऽऽऽ धाऽ धाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
किनताऽ ताऽकिन ताऽऽऽ धाऽ धाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

पलटा- नं 3

धाऽधाऽ धाऽधाऽ धाऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
ताऽताऽ ताऽताऽ ताऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

पलटा- नं 4

धाऽधाऽ ऽऽधाऽ धाऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
ताऽताऽ ऽऽताऽ ताऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

पलटा- नं 5

धाधाऽधा धाधाऽधा धाऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
तताऽता तताऽता ताऽऽऽ धाऽधाऽ | घिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

पलटा- नं 6

घाधाधाधा धाधाधाधा धाऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |
तातातता तातातता ताऽऽऽ धाऽधाऽ | धिनधाऽ धाऽधिन धाऽधिन तुनागिन |

तिहाई

धिनधाऽ घाऽधिन धाऽधाऽ धिनधाऽ | धाऽधिन धाऽधिन धाऽधाऽ धिनधाऽ |
धाऽधिन धाऽधाऽ धिनधाऽ धिनधाऽ । धाऽधिन धाऽधाऽ धिनधाऽ धाऽधिन | धा[6]

उ. नत्थू खां

सन् 1875 ई. में प्रसिद्ध तबला वादक उस्ताद नत्थू खाँ का जन्म हुआ | इनके पिता दिल्ली घराने के उस्ताद बोली बख़्श एवं पितामह उस्ताद काले खाँ से इनकी शिक्षा हुई | आप दिल्ली घराने के उच्च कोटि के कलाकार थे | इन्हें 'खलीफा' की उपाधि से सम्मानित किया गया | आपके हाथ की खूबसूरती एवं कसाव से सभी मोहित हो जाते थे | खलीफा नत्थू खाँ साहब आज भी दो उंगलियों के वादन के लिये याद किये जाते हैं | आप कई वर्षों तक कलकत्ता में रहे | 'हिज मास्टर्स व्हॉयस' कंपनी ने आपके वादन का ग्रामोफोन रिकार्ड बनाया था |

उस्ताद नत्थू खाँ के शिष्यों में मेरठ के उस्ताद हबीबुद्दीन खाँ एवं कलकत्ता के श्री हरेन्द्र किशोर राय चौधरी एवं श्री केशव चन्द्र बनर्जी उल्लेखनीय हैं | आपका निधन 65 वर्ष की उम्र में सन् 1940 में हुआ |[7]

उस्ताद नत्थू खां द्वारा राजा चक्रधर सिंह को प्रदत्त कायदा श्री वेदमणि सिंह ठाकुर द्वारा प्राप्त पाण्डुलिपि का छायाप्रति संलग्न त्रिताल 16 मात्रा

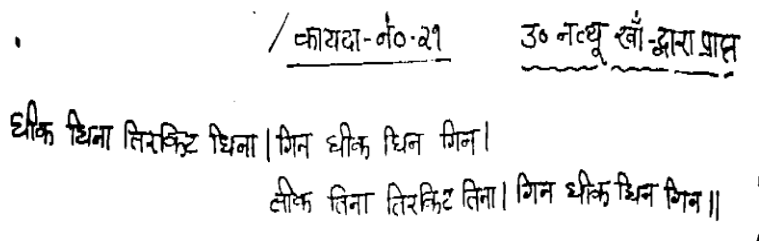

क़ायदा

धीक धिना तिरकिट धिना | गिन धीक धिन गिन |
तीक तिना तिरकिट तिना | गिन धीक धिन गिन |

पलटा- नं 1

धीक धिना धीक धिना | तिरकिट धिन गिन तिरकिट |
धिना गिवं घीक धिन | गिन धीक धिन गिन |
तीक तिना तीक तिना | तिरकिट धिन गिन तिरकिट |
धिन गिन धीक धिन | गिन धीक धिन गिन |

पलटा- नं 2

धागे धिना क्रधा तिरकिट | क्रधे sध गिन धागे |
धिगि नधा त्रिक धिन | गिन धिक धिन गिन |
तागे तिना क्रधा तिरकिट | क्रधे ऽध गिन धागे |
धिगि नधा त्रिक धिन | गिन धिक धिन गिन |

पलटा- नं 3

धीक धिना तिरकिट धिना । धीक धिना तिरकिट धिना |
धीक धिना तिरकिट धिना | गिन धीक धिन गिन |
तीक तीना तिरकिट तिना | तीक तीना तिरकिट तीना |
धीक धिना तिरकिट धिना | गिन धीक धिन गिन |

पलटा- नं 4

धिगि नधा त्रिक धिना | गिना ऽधा गेन धागे |
धिना तिरकिट, धिगि नधा | तिरकिट धिगिनधा तिरकिट |
तिगि नता त्रिक तिना | गिना sधा गेन धागे |
घीना तिरकिट, धिगि नधा | तिरकिट धिगि नधा तिरकिट |

पलटा- नं 5

धिगि नधा तिधि गिन | धागे धिना कृधा तिरकिट |
धिना तिरकिट, धिगि नधा | तिरकिट धिगिनधा तिरकिट |
तिगि नता तिति गिन । धागे तिना क्रधा तिरकिट |
धिना तिरकिट, धिगि नधा | तिरकिट धिगिनधा तिरकिट |

चक्राकार तिहाई

तिरकिट तकधा गेन तिरकिट | तकधा गेन धाति धागे |
नधा त्रिक धिन गिन | धागे क्रधा तिरकिट किटतक |
धाS SS धिगि नधा | तीधा गेन धिनगिन |
तिरकिट तकधा गेन तिरकिट | तकधा गेन धाति धागे |
नधा त्रिक धिन गिना | धागे क्रधा तिरकिट किटतक |
धाS SS धिगि नधा | तीधा गेन धिन गिन |
तिरकिट तकधा गेन तिरकिट | तकधा गेन धाति धागे |
नधा त्रिक धिन गिन | धागे क्रधा तिरकिट किटतक | धा[8]

निष्कर्ष:

इस प्रकार रायगढ़ दरबार में विभिन्न तबला वादकों का समय-समय पर आगमन होता रहता था | जिनको रायगढ़ दरबार में राजा द्वारा संरक्षण दिया जाता था | बाहर से आये विभिन्न तबला वादक राजा को भेंट स्वरुप

विभिन्न दुर्लभ रचनाएँ प्रदान किया करते थे जिनका संकलन कर राजा चक्रधर सिंह ने अनेकों ग्रन्थ लिखा | जो की आज पूर्ण रूप से उपलब्ध नहीं है परन्तु दरबार से सम्बंधित रायगढ़ के कुछ कलाकारों के पास उन ग्रंथों की छायाप्रति अभी भी उपलब्ध है तथा हस्तलिखित रूप में भी उनके पास उपलब्ध है |

मेरे द्वारा इस शोध पत्र में दिए गए कायदे भी इसी माध्यम से मुझे श्री वेदमणि ठाकुर जी से प्राप्त हुआ | ये जितनी भी रचनाएँ है सभी अत्यंत दुर्लभ रचनाएँ हैं जो तबले के विद्यार्थियों हेतु सोने, चांदी, हीरा, मोती इत्यादि बहुमूल्य रत्नों के सामान है | रायगढ़ के तबला परंपरा के अंतर्गत विभिन्न रायगढ़ के तबला वादकों ने इन संरक्षण प्राप्त गुरुओं से तबले की शिक्षा प्राप्त की तथा तबले वादन से सम्बंधित बारीकियां सीखी |

संगीत जगत पर रायगढ़ दरबार का बहुमूल्य योगदान रहा है | रायगढ़ दरबार में विभिन्न तबला वादकों को संरक्षण प्राप्त था | दरबार में रहते हुए उन गुनीजनों ने विभिन्न विशिष्ट रचनाएँ राजा चक्रधर सिंह जी को प्रदान की जिसमे से तीन बहुमूल्य कायदे इस शोध पत्र के माध्यम से संगीत जगत के सभी तबला वादकों, विद्यार्थियों, शोधार्थियों तथा संगीत प्रेमियों तक मैंने पहुचने की कोशिश की है | इससे सभी बहुत लाभान्वित होंगे |

सन्दर्भ:

1. कछवाहा, गणेश. संगीत कला और रायगढ़ ; श्री चक्रधर ललित कला केंद्र, रायगढ़ (म.प्र.) संस्करण : प्रथम 1995, पृ. सं. 24
2. ई मिस्त्री, अबान. पखावज और तबले के घराने एवं परम्पराएँ स्वर साधना समिति मुंबई संस्करण : द्वितीय 2000, पृ. सं. 186
3. सिंह, विद्यानाथ. ताल-सर्वांग ; छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी ग्रन्थ अकादमी, रायपुर; संस्करण : प्रथम 2008, पृ. सं. 229 – 230
4. ठा. वेदमणि सिंह से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त हस्तलिखित नोटबुक में लिखित रचनाएँ |
5. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीशचन्द्र. ताल कोश ; रूबी प्रकाशन इलाहाबाद ; संस्करण : 2017, पृ. सं. 53
6. ठा. वेदमणि सिंह से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त हस्तलिखित नोटबुक में लिखित रचनाएँ |
7. सिंह, विद्यानाथ. ताल-सर्वांग ; छत्तीसगढ़ राज्य हिंदी ग्रन्थ अकादमी, रायपुर; संस्करण : प्रथम 2008, पृ. सं. 226
8. ठा. वेदमणि सिंह से साक्षात्कार द्वारा प्राप्त हस्तलिखित नोटबुक में लिखित रचनाएँ |

भारत–म्यांमार संबंध

डॉ. राहुल कुमार सिंह*

प्रस्तावना

पूर्वोत्तर भारत से म्यांमार की सीमाएं लगती है। यह दक्षिण पूर्व एशिया में स्थित है। ब्रिटिश औपनिवेशिक काल तक यह बर्मा के नाम से जाना जाता था। 1989 ई. में सत्ता में आई सैनिक सरकार ने बर्मा का नाम बदलकर म्यांमार कर दिया। म्यांमार सार्क और आसियान दोनों संगठनों का सदस्य है। यह पूर्व और दक्षिण पूर्व एशिया का प्रवेश द्वार भी कहा जाता है। भारत, बांग्लादेश, चीन , थाईलैंड और लाओस इसके पड़ोसी देश है। म्यांमार का कुल क्षेत्रफल 6,78,000 वर्ग किलोमीटर है। यह उष्णकटिबंधीय मानसूनी जलवायु वाला देश है। यह प्रचुर प्राकृतिक संसाधन, उच्च साक्षरता दर एवं कम जनसंख्या घनत्व वाला देश है। इसकी जनसंख्या 5 करोड़ 40 लाख है। यह विश्व का 40 वा सबसे बड़ा देश है। म्यांमार का डेल्टा विश्व के सबसे बड़े धान उत्पादक क्षेत्रों में है। यंगून यहां का सबसे बड़ा शहर तथा प्रमुख बंदरगाह है। इसकी राजधानी नाएप्यीडा है। पूर्वोत्तर भारत के राज्यों की सीमाएं म्यांमार के साथ जुड़ी हुई है साथ ही में यह बंगाल की खाड़ी के साथ भी भारत से जुड़ा हुआ है। राष्ट्रीय सुरक्षा और व्यापारिक हितों के लिए म्यांमार भारत के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर एंव मिजोरम में स्थित अराकानयोमा की पर्वत श्रृंखलाएं भारत और मिजोरम के मध्य सीमाओं का निर्धारण करती हैं। इसे प्राकृतिक सीमा भी कहा जाता है।[1] भारत के पूर्वोत्तर राज्यों के विकास के लिए म्यांमार के साथ घनिष्ठ संबंध अति आवश्यक है। अलगाववादी तत्वों की उपस्थिति के कारण तथा घुसपैठ की घटनाओं के कारण भी म्यांमार के साथ घनिष्ठ संबंध आवश्यक है। दोनों देशों के मध्य ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनयिक रिश्तें मजबूत रहे हैं।म्यांमार के यंगून और मांडले दो ऐसे शहर हैं जहां भारतवासी व्यापार-वाणिज्य, नागरिक सेवाओं तथा शिक्षा के क्षेत्र में समृद्ध उपस्थिति दर्ज करते हैं।[2] भारत के बौद्ध प्रचारकों ने म्यांमार में बौद्ध धर्म का प्रचार किया। अंतिम मुगल बादशाह बहादुर शाह जफर के आखिरी दिन म्यांमार में ही बीते तथा उनकी कब्र भी म्यांमार में ही बनी है।

रणनीतिक तथा सामरिक दृष्टि से दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ संबंध मजबूत करने में म्यांमार एक सेतू का कार्य करता है। म्यांमार के माध्यम से भारत थाईलैंड तथा वियतनाम के साथ संबंधों को और मजबूत तथा व्यापक बन सकता है। म्यांमार इकलौता भारत का ऐसा पड़ोसी देश है जो 'पड़ोस प्रथम की नीति' तथा 'एक्ट ईस्ट नीति' दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

म्यांमार का इतिहास

म्यांमार का इतिहास यहां की मूल जातियों बर्मा तथा मून के संघर्ष से प्रारंभ होता है। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार 1044ई. में भारतीय राजा अणाव्रत इरावती डेल्टा तथा थाटोन पर शासन करता था। 1287 ई. में कुबलाई खान ने आक्रमण करके इसे समाप्त किया। सोलहवी शताब्दी में तोउगू वंश ने यहां शासन प्रारंभ किया तथा 1758 ई. में रंगून को राजधानी बनाया गया था। 19वीं शताब्दी में अंग्रेजों ने भारत में अपने साम्राज्य स्थापित करने के बाद चीन से व्यापारिक संबंध बढ़ाने का कार्य प्रारंभ किया। इसके लिए बर्मा महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में दिखाई पड़ा। 1824ई., 1826 ई.तथा 1852 ई. में आंग्ला-बर्मा युद्ध हुआ। इन युद्धों में विजय प्राप्त करके अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य का विस्तार वर्मा में करना प्रारंभ कर दिया। 1886ई. में अंग्रेजों ने संपूर्ण वर्मा पर अधिकार कर के इसे ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बना लिया। 1937 ईस्वी में ब्रिटेन ने बर्मा को भारत से

* असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, विभाग जवाहरलाल नेहरू स्मारक पी.जी. कॉलेज, महाराजगंज, उत्तर प्रदेश

विभाजित करके अपनी अलग क्राउन कॉलोनी बना लिया । 1942 ईस्वी में बर्मा की बर्मा इंडिपेंडेंस आर्मी ने बर्मा पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकार में ले लिया। बर्मा इंडिपेंडेंस आर्मी आगे चलकर एंटी फासीस्ट पीपल फ्रीडम लीग में परिवर्तित हो गई तथा इसनें जापानी शासन का विरोध करना प्रारंभ कर दिया। 1945 ईस्वी में ब्रिटेन ने आंग सान के नेतृत्व में मित्र राष्ट्रों की सहायता से बर्मा को जापान के आधिपत्य से स्वतंत्र करा लिया। 4 जनवरी 1948ई. को स्वतंत्र बर्मा देश की स्थापना हुई।

भारत-म्यांमार संबंध (1947ई. से 1960ई.)

1886ई.से 1939ई. तक म्यांमार ब्रिटिश भारत का ही हिस्सा था। जिसके कारण म्यांमार के साथ ऐतिहासिक, सांस्कृतिक संबंध समृद्ध थे। 1948ई. में म्यांमार की स्वतंत्रता के बाद भारत ने म्यांमार के साथ सांस्कृतिक, वाणिजिक तथा राजनयिक संबंध स्थापित करना पुनः प्रारंभ किया। 1951ई. में भारत-म्यांमार के मध्य मैत्री संधि पर हस्ताक्षर किए गए। जिससे दोनों देशों के मध्य राजनयिक संबंध प्रारंभ हुआ। स्वतंत्रता के बाद यून्यू म्यांमार के प्रथम प्रधानमंत्री बने। उनके भारत के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के साथ घनिष्ठ संबंध थे। दोनों नेता लोकतंत्र समर्थक थे। इसलिए संबंधों में गतिशीलता प्रारंभ हो गई। स्वतंत्रता के पश्चात म्यांमार में ब्रिटिश संसदीय प्रणाली की स्थापना हुई। लेकिन राजनीतिक प्रक्रिया पर एंटी-फासिस्ट पीपुल्स फ्रीडम लीग का वर्चस्व स्थापित रहा।कुछ समय के पश्चात लीग में मतभेद उत्पन्न हो गए जिसके कारण प्रधानमंत्री ने आर्मी जनरल विन को राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करने की सलाह दी। प्रधानमंत्री की इस सलाह से ही म्यांमार की राजनीति में सेना का हस्तक्षेप प्रारंभ हुआ। 2 वर्ष के पश्चात चुनाव हुए जिससे म्यांमार में लोकतांत्रिक सरकार की स्थापना हुई।1962ई. में म्यांमार में सेना के द्वारा सत्ता पर अधिकार कर लेने के कारण भारत और म्यांमार संबंधों में तनाव उत्पन्न हो गया।[3] लोकतांत्रिक सिद्धांतों तथा मूल्यों में विश्वास करने वाले भारत नें सेना के द्वारा लोकतंत्र को कुचलने के कार्य की निंदा की गई। भारत ने उस समय बहुत संयमित प्रतिक्रिया दी थी। भारत ने कहा था कि वह किसी देश के आंतरिक विषयों में तब तक कोई हस्ताक्षर नहीं करेगा जब तक की उस घटना का प्रत्यक्ष प्रभाव भारत के ऊपर ना पड़े। इस समय यह दिखाई पड़ता है कि भारत के संबंध या तो म्यांमार के साथ मधुर रहे या फिर कटु रहे।

भारत-म्यांमार संबंध (1962ई. से 2000ई.)

1962 ई. में लोकतांत्रिक सरकार के पतन के पश्चात म्यांमार में लगातार 26 वर्षों तक सैन्य शासन बना रहा। इस अवधि में वहां का संविधान भंग कर दिया गया तथा प्रेस की आजादी को प्रतिबंधित कर दिया गया। यहां बर्मा सोशलिस्ट प्रोग्राम पार्टी का एकाधिकार स्थापित हो गया। 1988ई. में आग सान सू ची के नेतृत्व में म्यांमार में सैन्य शासन के विरुद्ध राष्ट्रवादी आंदोलन प्रारंभ हुआ। जन आंदोलन के कारण जनरल विन को सत्ता छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा। 1989 ई. में बर्मा का नाम परिवर्तित करके 'म्यांमार' कर दिया गया तथा इसकी राजधानी को रंगून से 'यंगून' नाम दिया गया। 1984ई. से 1989ई. की अवधि के दौरान राजीव गांधी भारत के प्रधानमंत्री बने उनकी सरकार ने म्यांमार में चल रहे लोकतंत्र समर्थक आंदोलन को अपना समर्थन दिया। भारत के इस कार्य की प्रतिक्रिया में म्यांमार के सैन्य शासक ने पूर्वोत्तर के विद्रोही समूहों को प्रत्यक्ष समर्थन देना प्रारंभ कर दिया। इससे दोनों देशों के संबंधों में तनाव उत्पन्न हुआ। भारत की छवि म्यांमार में शत्रु देश के रूप में स्थापित होने लगी। भारत के सुरक्षा हितों पर उत्पन्न इस खतरे के कारण 1987ई. में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने म्यांमार की यात्रा की। दोनों देशों के मध्य अच्छे संबंध बनने की नीव पडी।[4] यह संबंध और विश्वास लंबे समय तक स्थापित नहीं रह सका।1988ई. में सैन्य शासन के बढ़ते अत्याचारों के कारण बड़ी संख्या में म्यांमार के नागरिक भारत में शरण लेने लगे। इन शरणार्थियों की संख्या तीव्र गति से बढ़ने लगी, जिससे दोनों देशों के संबंध पुनः खराब होने लगी। इस स्थिति का फायदा उठाते हुए चीन ने म्यांमार से नजदीकी संबंध स्थापित करना प्रारंभ कर दिया। म्यांमार और चीन के बढ़ते संबंधों ने भारत

की चिंता को बढ़ाने का कार्य किया इसके कारण 1993ई. में नरसिंहराव तथा बाद में अटल बिहारी वाजपेई की सरकार ने म्यामार के साथ पुनः अच्छे संबंध बनाने पर बल दिया। जिसके कारण भारत- म्यांमार संबंधों का एक नया दौर प्रारंभ हुआ। भारत ने म्यांमार के साथ कूटनीतिक रिश्ते स्थापित किये लेकिन भारत ने म्यांमार की तानाशाही सरकार का समर्थन नहीं किया। भारत की आत्मा लोकतांत्रिक शक्तियों का समर्थन करती रही लेकिन देश हित में भारत ने म्यांमार के सैन्य शासन का प्रत्यक्ष विरोध करके पाकिस्तान की तरह एक और पड़ोसी दुश्मन नहीं उत्पन्न करना चाहता था। जो चीन के प्रत्यक्ष प्रभाव के कारण भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में आतंकवादी संगठनों को प्रोत्साहित करने का कार्य करें।[5]

भारत म्यांमार संबंध(2001ई. से 1914ई.)

इस अवधि में भारत और म्यांमार संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण था। इस दौरान दोनों देशों के मध्य कृषि प्राकृतिक गैस तथा तेल, सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार तथा खाद्य जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर सहयोग बढ़ाने के लिए दोनों देश सहमत हुई। दोनों देशों ने 260 किलोमीटर लंबे बॉर्डर रोड ऑर्गेनाइजेशन के द्वारा निर्मित भारत म्यांमार मैत्री मार्ग का उद्घाटन किया। दोनों देशों के मध्य बन रहे इन संबंधों को और अधिक मजबूत करने के लिए नवंबर 2003ई. में भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति भैरव सिंह शेखावत ने म्यांमार की यात्रा की। इस इस यात्रा के परिणाम स्वरूप दोनों देशों के मध्य सात समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए किए गए। 2008ई. में मानवाधिकारों के हनन के आरोप में भारत ने म्यांमार को दी जाने वाली आर्थिक सहायता में कटौती कर दी। जिससे दोनों देशों के संबंधों में खटास उत्पन्न हुआ। इसी वर्ष म्यांमार में 'नरगिस' तूफान के कारण भारी तबाही हुई। भारत ने मानवता के आधार पर म्यानमार सरकार की बड़ी मदद की। भारत की इस मदद से वहां की जनता तथा वहां के सरकार को विश्वास हो गया कि भारत जैसे अच्छे पड़ोसी के साथ मजबूत संबंध होना बहुत ही आवश्यक है। नवंबर 2010ई. में म्यांमार में संसदीय चुनाव हुए जिसमें विपक्षी नेता आंग सांग सु ची को चुनाव में भाग लेने की अनुमति नहीं प्रदान की गई। चुनाव में रिटायर्ड जनरल यू थीन सी की पार्टी को विजय प्राप्त हुई। नई सरकार के साथ भारत ने संबंधों को मजबूत बनाने को प्राथमिकता दी। भारत के विदेश मंत्री एस.एस. कृष्णा तीन दिवसीय दौरे पर म्यांमार गए। इस यात्रा के दौरान भारत के विदेश मंत्री ने वहां के राष्ट्रपति तथा विदेश मंत्री से मुलाकात की तथा भारत के मणिपुर को म्यांमार के तिदिम से जोड़ने वाले सड़क मार्ग के समझौते पर हस्ताक्षर किए। भारत से थाईलैंड जाने वाले राजमार्ग पर म्यांमार के साथ त्रिपक्षीय सहयोग का भी प्रस्ताव रखा। म्यांमार में औद्योगिक पार्क के निर्माण लिए भी समझौता हुआ।

2011ई. में 12 से 15 अक्टूबर के मध्य में म्यांमार के राष्ट्रपति यू थीन सीन ने भारत की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह से मुलाकात की साथ ही में उन्हें म्यांमार यात्रा का निमंत्रण भी दिया। भारत के प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह ने 2012ई. में 27 से 29 में के मध्य में म्यांमार की यात्रा पर पहुंचे। इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य 15 समझौता पर हस्ताक्षर किए गए।[6] इन समझौतों का उद्देश्य भारत के सहयोग से म्यांमार की विकास को गति देना था साथ ही में भारत म्यांमार संपर्क को और अधिक सुगम बनाना था। भारत ने म्यांमार के लिए 27.59 अब रुपए की ऋण सहायता स्वीकार की। इसके अतिरिक्त सूचना प्रौद्योगिकी, सीमा परिवहन व्यवस्था, कृषि अनुसंधान तथा अन्य अनेक समझौते भी हुए। 2012ई. में आंग सान सू ची ने भारत की यात्रा की।सू ची का भारत से गहरा लगाव रहा है क्योंकि उनका ज्यादातर समय शिक्षा तथा अन्य कार्यों में भारत में ही बीता था। इस यात्रा के दौरान उन्होंने स्वयं को आंशिक रूप से भारतीय नागरिक स्वीकार किया। भारत आसियान शिखर सम्मेलन की बैठक में भाग लेने के लिए म्यांमार के राष्ट्रपति थिन सेन दिसंबर 2012ई. में दिल्ली आए। भारत ने म्यांमार में आधारभूत ढांचे के निर्माण का कार्य करना प्रारंभ किया। भारत ने म्यांमार के रखाइन राज्य में सीतवे बंदरगाह के निर्माण का कार्य प्रारंभ किया। बंदरगाह का निर्माण एस्सार ग्रुप के द्वारा 2013ई. में पूर्ण किया गया। इस बंदरगाह के

प्रारंभ होने से भारत के लिए अपने सामानों की आपूर्ति कोलकाता बंदरगाह से सितवे बंदरगाह तक पहुंचना आसान हो गया। भारत मणिपुर से म्यांमार होते हुए थाईलैंड तक सड़क निर्माण की योजना पर भी कार्य कर रहा है। 2015ई. तक दोनों देशों के मध्य तीन अरब डालर तक परस्पर व्यापार करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया।

2013 ई. में दोनों देशों के मध्य मणिपुर में सीमा पर बांड-बंदी को लेकर के विवाद उत्पन्न हो गया। म्यांमार की सेना ने कहा कि वह अपने क्षेत्र में बाड-बंदी कर रहा है जबकि भारत सरकार ने इस पर रोक लगा दिया। मार्च 2014ई. में भारत के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने बीम्स्टेक शिखर बैठक के लिए म्यांमार की यात्रा की।

भारत म्यांमार संबंध 2014ई. से अब तक

2014ई. में नरेंद्र मोदी भारत के प्रधानमंत्री बने उन्होंने 'पड़ोस प्रथम की नीति' का अनुसरण किया। प्रधानमंत्री मोदी ने सितंबर 2017ई. में म्यांमार की प्रथम यात्रा की। इस यात्रा के दौरान वहां की सैन्य सरकार ने प्रधानमंत्री मोदी को विश्वास दिलाया कि वह मणिपुर के पीपुल्स लिब्रेशन आर्मी, नागालैंड के नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ़ नागालैंड, असम की अल्फा जैसे उग्रवादी संगठनों को नियंत्रित करने की कार्यवाही करेगा।[7] प्रधानमंत्री मोदी ने रोहिंग्या मुसलमान तथा म्यांमार में चीन के बढ़ते प्रभाव को लेकर भी चर्चा की। 13 दिसंबर 2018ई. को भारत के राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद भारतीय उद्योग परिषद तथा यूनियन ऑफ म्यांमार फेडरेशन ऑफ चैंबर्स ऑफ़ कॉमर्स के तत्वाधान में आयोजित एंटरप्राइज इंडिया प्रदर्शनी के उद्घाटन के लिए म्यांमार गये। राष्ट्रपति ने इस यात्रा के दौरान प्रसिद्ध काली मंदिर में दर्शन किया। उन्होंने दोनों देशों की समृद्धि तथा खुशहाली की प्रार्थना की। राष्ट्रपति ने बहादुर शाह जफर के मकबरे पर जाकर उन्हें श्रद्धा सुमन भी अर्पित किया।[8]

27 फरवरी 2022ई. को म्यांमार के राष्ट्रपति यू विन माइंट भारत की यात्रा पर आए। इस दौरान 10 समझौता पर हस्ताक्षर किए गए। दोनों देशों ने सीमा पर यातायात को सुगम बनाने के लिए द्विपक्षीय मोटर वाहन समझौते पर चर्चा किया। अप्रैल 2020ई. तक इंफाल एवं मांडले के मध्य बस सेवा प्रारंभ करने की सहमति व्यक्ति की। विकास कार्यक्रमों के अंतर्गत विगत 3 वर्षों में भारत के द्वारा म्यांमार में 18 स्वास्थ्य केंद्र, 42 स्कूल तथा 51 पुल एवं सड़कों का निर्माण किया गया। इस यात्रा के दौरान 5 मिलियन डॉलर व्यभार वाली 29 अतिरिक्त परियोजनाएं 2020-21 तक पूर्ण करने पर समझौता हुआ। भारत- म्यांमार के मध्य आर्थिक एवं व्यापारिक संबंधों को बढ़ाने के लिए 24 नवंबर 2020 ई.को संयुक्त व्यापार समिति की वर्चुअल बैठक आयोजित की गई। इस बैठक के दौरान दोनों देशों ने द्विपक्षीय संपर्क तथा व्यापार को प्रोत्साहन देने के लिए भारतीय अनुदान सहायता कार्यक्रम के अंतर्गत तामु में एक अत्याधुनिक एकीकृत चेक पोस्ट की स्थापना पर सहमति प्रदान की।[9] इस समय भारत म्यांमार का चौथा सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। भारत और म्यांमार के मध्य 3200 किलोमीटर लंबे 4लेन हाईवे के निर्माण को लेकर भी समझौता हुआ।

2020 ई.में म्यांमार में आम चुनाव हुए इस चुनाव में आंग सांन सू ची की पार्टी दोनों सदनों में 396 सीटों पर विजय प्राप्त किया। सेना समर्थित पार्टी की कारारी पराजय हुई। 1 फरवरी 2021ई. को चुनाव में धांधलीकरण का आरोप लगाकर सेना ने तख्ता पलट करते हुए सत्ता पर अधिकार कर लिया। स्टेट काउंसलर सू ची तथा राष्ट्रपति विन मिन सहित अनेक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। सूची पर आयात निर्यात के नियमों पर उल्लंघन करने तथा गैर कानूनी तरीके से दूर संचार उपकरण रखने का आरोप लगाया गया। तख्ता पलट के साथ ही सेना ने देश में एक साल के लिए आपातकाल लागू कर दिया। म्यांमार में पुनः सेना का शासन स्थापित हो गया। पूरी दुनिया ने सेना के इस कदम की निंदा की। भारत ने म्यांमार के इस घटनाक्रम की बहुत ही सधे शब्दों में प्रतिक्रिया दी। म्यांमार में लोकतंत्र के समर्थन के साथ ही भारत ने यह भी सुनिश्चित

किया कि द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने की नीति बनी रहे। भारत जहां एक तरफ दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के साथ आर्थिक संबंध मजबूत करने में म्यांमार को प्रवेश द्वार के रूप में मानता है वहीं दूसरी तरफ भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों में अलगाववाद तथा हिंसा में शामिल विद्रोही गुटों को नियंत्रित करने के लिए म्यांमार का सहयोग भी चाहता है। चीन म्यांमार के सैन्य शासकों के साथ अच्छे संबंध बना कर के इस देश को अपने पक्ष में करना चाहता है जिसके कारण चीन के प्रभाव को म्यांमार में कम करना भी भारत के लिए चुनौती है इसलिए भी म्यांमार भारत के लिए महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

भारत और म्यांमार के मध्य विवाद के कई बिंदु हैं जिनके कारण पिछले कई वर्षों से में म्यांमार भारत की विदेश नीति तथा राजनीतिक चर्चाओं में शामिल नहीं रहा है। यथार्थ यह है कि एक स्थिर एवं स्वायत्तशासी देश के रूप में म्यांमार का मजबूत होना भारत के लिए सामरिक तथा रणनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत के 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने के लक्ष्य को प्राप्त करने में म्यांमार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होगी। इसलिए भारत का राष्ट्रीय हित इस नीति में ही है कि पूर्वोत्तर में अलगाववादी संगठनों पर नियंत्रण बना रहे इसी कारण से एक ओर जहां भारत म्यांमार में लोकतंत्र का समर्थन करता है वहीं दूसरी ओर सैन्य शासक जुन्टा के साथ द्विपक्षीय संबंध को भी मजबूत बनाने का कार्य कर रह है।

संदर्भ

1- विभूति सिंह राजपूत, 20 जुलाई 2020, थिंक बाजार
2- भारत-म्यांमार संबंधों का परा ऊपर उठना, मनीश चंद, 10 अगस्त 2014, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार
3- म्यांमार में सेना का शासन आने से भारत पर क्या पड़ेगा असर, अभिनय प्रकाश, प्रभा साक्षी, 9 फरवरी 2021
4- जटिल संबंधों की विरासत, सी. उदय भास्कर, दैनिक जागरण, 20 नवंबर 2012
5- भारत को लोकतंत्र विरोधी शक्तियों से बातचीत क्यों करनी पड़ रही है, अजय झा, 23 जून 2021
6- म्यांमार से मित्रता, डॉ. लक्ष्मी शंकर यादव, दैनिक जागरण, 2 जून 2012
7- मोदी की म्यांमार यात्रा, इंद्राणी बाग्ची, टाइम्स न्यूज़ नेटवर्क, 6 सितंबर 2017
8- राष्ट्रपति सचिवालय, 13 दिसंबर 2018
9- वणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय,24 नवंबर 2020

वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन क्षमता संबंधी एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

अनिता कुमारी*
डॉ. रामदेव प्रसाद**

सार–

यह अध्ययन गया जिला, बिहार में रहने वाली वृद्ध (60 वर्ष एवं ऊपर) महिलाओं में उनकी शारीरिक स्वास्थ्य–स्थिति तथा आय–अर्जन क्षमता (उपार्जन/आर्थिक सहभागिता) के बीच मनोवैज्ञानिक संबंधों का विश्लेषण करता है। कुल 120 प्रतिभागियों में से 60 ग्रामीण और 60 शहरी वृद्ध महिलाएँ शामिल की गईं। उद्देश्य था यह जानना कि ग्रामीण एवं शहरी पृष्ठभूमि की वृद्ध महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन की स्थिति में क्या भिन्नताएँ हैं, तथा इनका मनोवैज्ञानिक समृद्धि (उदाहरण–स्वरूप आत्म–सन्तुष्टि, भावात्मक भलाइ) से क्या संबंध है। अध्ययन में सर्वेक्षण प्रश्नावली के माध्यम से शारीरिक स्वास्थ्य (स्वआरंभ, क्रियाशीलता, रोग/समस्या), आय–अर्जन क्षमता (स्थिति, स्रोत, स्वयं–उपार्जन या पारिवारिक आश्रय) तथा मनोवैज्ञानिक संकेतक (स्व–मूल्यांकन, जीवन–संतुष्टि) मापे गए। प्राप्त परिणामों के अनुसार, शहरी वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य औसत बेहतर थी और आय–अर्जन क्षमता भी ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा बेहतर पाई गई। इस प्रकार अध्ययन ने यह सुझाव दिया कि स्वस्थ शारीरिक स्थिति एवं सक्रिय आर्थिक सहभागिता वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक समृद्धि में सकारात्मक भूमिका निभा सकती है। इसके आधार पर वृद्ध महिलाओं के लिए ग्रामीण–शहरी भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए स्वास्थ्य व स्वयं–उपार्जन कार्यक्रमों की सिफारिश की गई है।

मूल शब्द– *वृद्ध महिला, शारीरिक स्वास्थ्य, आय–अर्जन क्षमता, ग्रामीण–शहरी भिन्नता, मनोवैज्ञानिक समृद्धि, गया जिला।*

वृद्धावस्था जीवन–चक्र का वह महत्वपूर्ण चरण है जिसमें शारीरिक, सामाजिक तथा आर्थिक चुनौतियाँ सामने आती हैं। विशेष रूप से महिलाएँ, जो सामाजिक–आर्थिक रूप से अल्पसंख्यक स्थिति में होती हैं, वृद्धावस्था में अनेक जोखिमों से ग्रस्त होती हैं जैसे कम आय स्रोत, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच की कमी, पारिवारिक आश्रय पर निर्भरता। भारत में जैसे–जैसे जीवन–आयु बढ़ रही है, वृद्ध–जनसंख्या भी तीव्रता से बढ़ रही है। लेकिन ग्रामीण–शहरी पृष्ठभूमि में रहने वाली वृद्ध महिलाओं में स्वास्थ्य एवं आर्थिक सहभागिता की स्थिति में उल्लेखनीय अंतर देखने को मिलता है।

शारीरिक स्वास्थ्य (जैसे गतिशीलता, रोग–रूपता, क्रियाशीलता) और आय–अर्जन क्षमता (स्वयं कमाई, आश्रित–स्थिति, पारिवारिक योगदान) दोनों ही वृद्ध महिलाओं की समग्र जीवन–मान और मनोवैज्ञानिक भलाई (स्वयं–सन्तुष्टि, आत्म–मूल्यांकन) से गहराई से जुड़े हैं। उदाहरण स्वरूप अध्ययन में यह पाया गया कि आर्थिक आत्मनिर्भरता और आय–संतुष्टि वृद्ध वयस्कों में मनोवैज्ञानिक कष्ट को कम करती है। इसी प्रकार, ग्रामीण–शहरी भिन्नताओं पर भी शोध हुआ है कि ग्रामीण वृद्धों में स्वास्थ्य–सेवाओं की पहुँच कम है, और आय–स्रोत सीमित हैं। इसलिए, इस अध्ययन का सन्दर्भ गया जिले में वृद्ध महिलाओं पर केन्द्रित कर, विशेष रूप से ग्रामीण एवं शहरी स्थितियों में तुलना–विश्लेषण करना है।

अतः इस अध्ययन का महत्व इस दृष्टि से है कि यह वृद्ध महिलाओं की शारीरिक एवं आर्थिक स्थिति के मनोविज्ञान–संबंधित पहलुओं को उजागर करता है, ग्रामीण–शहरी अंतरों को बूँद–बूँद कर सामने लाता है, तथा नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करता है।

अध्ययन प्रश्न–

1. गया जिले की ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध (60 वर्ष एवं ऊपर) महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य की स्थिति में क्या भिन्नताएँ पाई जाती हैं?

* शोध छात्रा, मनोविज्ञान विभाग,मगध विश्वविद्यालय, बोधगया
** वरीय सहायक प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग, गया कॉलेज, गया

2. इन वृद्ध महिलाओं की आय–अर्जन क्षमता (स्वयं–उपार्जन, आर्थिक योगदान, आश्रित–स्थिति) में ग्रामीण एवं शहरी में क्या अंतर हैं?
3. शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन क्षमता के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध मौजूद है?
4. किस पृष्ठभूमि (ग्रामीण या शहरी) में आय–अर्जन क्षमता का वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक समृद्धि (जैसे जीवन–संतुष्टि, आत्म–मूल्यांकन) पर अधिक प्रतिफल है?
5. क्या यह परिकल्पना सही है कि शहरी वृद्ध महिलाएँ ग्रामीण वृद्ध महिलाओं की तुलना में बेहतर शारीरिक स्वास्थ्य तथा बेहतर आय–अर्जन क्षमता रखती हैं, और यह उनकी मनोवैज्ञानिक समृद्धि में परिलक्षित होती है?

अग्रवाल, रेखा (2019) अपने ग्रंथ "भारत में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन" में अग्रवाल ने यह प्रतिपादित किया कि भारतीय समाज में वृद्ध महिलाओं की आर्थिक स्थिति अत्यंत अस्थिर है। अधिकांश महिलाएँ आश्रित जीवन व्यतीत करती हैं तथा सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की जानकारी या पहुँच सीमित होती है। उन्होंने यह भी पाया कि जिन महिलाओं के पास स्व–आय या पेंशन का कोई स्रोत है, उनमें आत्म–संतोष और मानसिक स्वास्थ्य अपेक्षाकृत बेहतर पाया गया। आर्थिक आत्मनिर्भरता वृद्ध महिलाओं के मानसिक संतुलन और आत्म–संतोष से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है।[1]

सिंह, सुषमा (2020) द्वारा किए गए "ग्रामीण वृद्ध महिलाओं का स्वास्थ्य और जीवन–संतोष" अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण वृद्ध महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर शहरी महिलाओं की तुलना में निम्न है। चिकित्सा–सुविधाओं की कमी, पोषण–अभाव और पारिवारिक बोझ उनके स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि सामाजिक समर्थन और पारिवारिक सहभागिता जीवन–संतोष को बढ़ाती है। उन्होंने पाया कि स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता और पारिवारिक समर्थन, वृद्ध महिलाओं के जीवन–संतोष के महत्वपूर्ण घटक हैं।[2]

कुमारी, प्रीति (2021) पटना विश्वविद्यालय में किए गए इस अध्ययन "वृद्ध महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं मानसिक स्वास्थ्य पर अध्ययन" में कुमारी ने पाया कि जो वृद्ध महिलाएँ किसी न किसी प्रकार के आर्थिक कार्य (जैसे सिलाई, खेती, स्वरोजगार आदि) से जुड़ी हैं, उनमें आत्म–विश्वास अधिक है। उन्होंने पाया कि आर्थिक आत्मनिर्भरता से उनमें आत्म–मूल्य की भावना, सामाजिक सक्रियता और मानसिक स्वास्थ्य में सुधार देखा गया आय–अर्जन के अवसर वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक स्थिति को सुदृढ़ बनाते हैं।[3]

राजपूत, मंजू (2018) ने "भारतीय ग्रामीण महिलाओं की स्वास्थ्य–सुविधाओं की स्थिति" पर आधारित अध्ययन में यह स्पष्ट किया कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच सीमित है। अधिकांश वृद्ध महिलाएँ अपने रोगों को 'स्वाभाविक वृद्धावस्था' समझती हैं और उपचार नहीं करातीं। शिक्षा–अभाव एवं सामाजिक संकोच के कारण वे स्वास्थ्य सुविधाओं का उपयोग नहीं करतीं। उन्होंने पाया कि स्वास्थ्य जागरूकता की कमी और सेवाओं तक पहुँच न होना, ग्रामीण वृद्ध महिलाओं के शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है।[4]

सिंह, प्रमोद (2021) बी.एम.सी. पब्लिक हेल्थ में प्रकाशित इस शोध में सिंह ने भारत में वृद्ध जनसंख्या के बीच स्वास्थ्य–सेवाओं के उपयोग में ग्रामीण–शहरी असमानता का विश्लेषण किया। परिणामस्वरूप यह पाया गया कि शहरी वृद्ध जनों को चिकित्सीय सेवाएँ, पेंशन, और सामाजिक–सुरक्षा योजनाएँ अधिक सुलभ हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक असमानता और स्वास्थ्य संस्थानों की कमी प्रमुख कारण हैं। ग्रामीण–शहरी भिन्नता वृद्धजनों की स्वास्थ्य स्थिति का प्रमुख निर्धारक तत्व है।[5]

एजवेल फाउंडेशन (2018) संस्था की रिपोर्ट "भारत में वृद्ध व्यक्तियों की आय–व्यय संरचना में परिवर्तन" में बताया गया कि भारत में 65% वृद्ध महिलाएँ किसी न किसी रूप में आर्थिक रूप से आश्रित हैं। वृद्ध महिलाओं की आय का मुख्य स्रोत पारिवारिक सहायता है, जबकि स्वरोजगार या पेंशन जैसी स्वतंत्र आय का प्रतिशत बहुत कम है। निष्कर्षतः पाया गया कि आय का अभाव वृद्ध महिलाओं के सामाजिक सम्मान और मानसिक संतुलन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है।[6]

मुखोपाध्याय, ए. एवं सह–लेखक (2021) इस अध्ययन "स्व–अनुभूत आय–स्थिति एवं मानसिक तनाव तथा आत्म–कल्याण के मध्य सम्बन्ध" उन्होंने अध्ययन में यह पाया गया कि वृद्ध व्यक्तियों में जो अपनी आर्थिक स्थिति को 'संतोषजनक' मानते हैं, उनमें मनोवैज्ञानिक तनाव का स्तर कम होता है और

जीवन–संतुष्टि का स्तर अधिक। आर्थिक आत्मनिर्भरता और मानसिक स्वास्थ्य के बीच गहरा सकारात्मक सम्बन्ध पाया गया। आय–स्थिति का आत्म–बोध, मानसिक स्वास्थ्य के प्रमुख कारकों में से एक है।[7]

पांडे, नीलिमा (2020) के अनुसार वृद्ध महिलाओं का मनोवैज्ञानिक कल्याण केवल आर्थिक कारकों पर निर्भर नहीं करता, बल्कि सामाजिक समर्थन, पारिवारिक स्वीकृति और आत्म–सम्मान भी समान रूप से प्रभावी हैं। जिन महिलाओं को परिवार और समाज से सम्मान व भावनात्मक सहयोग मिलता है, उनमें तनाव और अवसाद का स्तर कम पाया गया। उन्होंने अध्ययन में पाया कि मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य बहुआयामी है– इसमें आय, परिवार और समाज तीनों की भूमिका होती है।[8]

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO, 2019) NSSO की रिपोर्ट "भारत में वृद्धजनों की स्थिति" के अनुसार देश में वृद्धजनों की संख्या तेजी से बढ़ रही है, परंतु स्वास्थ्य, आय और सामाजिक–सुरक्षा के मामले में महिलाओं की स्थिति पुरुषों की तुलना में कमजोर है। ग्रामीण क्षेत्रों में पेंशन योजनाओं की पहुँच सीमित है और स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग बहुत कम पाया गया। निष्कर्षत के रूप में भारत में वृद्ध महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा तंत्र पर्याप्त नहीं है।[9]

सिन्हा, रश्मि (2022) "बिहार की वृद्ध महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य ग्रामीण–शहरी परिपेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन" में सिन्हा ने पाया कि गया और पटना जिले की शहरी वृद्ध महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य स्तर ग्रामीण महिलाओं से बेहतर है। इसका मुख्य कारण है शिक्षा, सामाजिक संपर्क और चिकित्सा सुविधाओं की सुलभता। उन्होंने अध्ययन में पाया कि ग्रामीण–शहरी भिन्नता वृद्ध महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण निर्धारक है।[10]

पूर्व शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि वृद्ध वयस्कों में आर्थिक स्थिति तथा स्वयं–उपार्जन को लेकर मनोवैज्ञानिक तनाव एवं जीवन–संतुष्टि के बीच महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। उदाहरण स्वरूप, मनोवैज्ञानिक संकट और व्यक्तिपरक कल्याण के साथ स्व–अनुभूत आय स्थिति का संबंध भारत में वृद्ध वयस्कों के बीच एक क्रॉस–सेक्शनल अध्ययन में पाया गया कि जिन वृद्ध वयस्कों की आय पर्याप्त नहीं थी, वे 2.23 गुना अधिक संभावना रखते थे कि उन्हें मनोवैज्ञानिक तनाव हो। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण–शहरी अंतर पर आधारित अध्ययन में स्पष्ट हुआ है कि ग्रामीण वृद्ध वयस्कों को स्वास्थ्य–सेवाओं तथा भोजन–आवश्यकताओं में अधिक असमर्थता का सामना करना पड़ता है। साथ ही, वृद्ध महिलाओं में ग्रामीण–शहरी तथा लिंग–भेद के कारण अवसाद व कोविड–प्रभाव (मानसिक स्वास्थ्य) की संभावना अधिक पाई गई है।

शारीरिक स्वास्थ्य–स्थिति के संदर्भ में भी, ग्रामीण वृद्ध महिलाओं में गतिशीलता–समस्याएँ, रोग–बाधाएँ तथा स्वास्थ्य–सेवाओं तक पहुँच की कमी पाई गई है। आय–अर्जन क्षमता के आधार पर एक भारत–व्यापी सर्वेक्षण में यह पाया गया है कि ग्रामीण वृद्धों में "नौकरी/उपार्जन" की संभावना कम है तथा पेंशन या अन्य आय स्रोत कम मौजूद हैं। इन शोधों से यह संकेत मिलता है कि वृद्ध महिलाओं के लिए शारीरिक स्वास्थ्य, आय–सहायता. सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि एक समग्र ढाँचा तैयार करते हैं, जिसमें ग्रामीण–शहरी भिन्नताएँ महत्वपूर्ण हैं। इस अध्ययन में गया जिले की ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं पर इन बातों को स्थानीय संदर्भ में देखने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. गया जिले में 60 वर्ष एवं उससे ऊपर की वृद्ध महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य तथा आय–अर्जन क्षमता की स्थिति का वर्णन करना।
2. ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में इन दोनों आयामों के बीच तुलनात्मक विश्लेषण करना।
3. शारीरिक स्वास्थ्य व आय–अर्जन क्षमता के बीच सम्बन्ध का मूल्यांकन करना।
4. इन आयामों का वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक समृद्धि (स्वयं–सन्तुष्टि, आत्म–मूल्यांकन) पर प्रभाव देखना।
5. प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं की स्थिति सुधारने हेतु सिफारिशें प्रस्तुत करना।

परिकल्पना

H_1 शहरी वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य स्थिति ग्रामीण वृद्ध महिलाओं की तुलना में बेहतर होगी।

H_2. शहरी वृद्ध महिलाओं की आय–अर्जन क्षमता ग्रामीण वृद्ध महिलाओं की तुलना में बेहतर होगी।

H_3. वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य स्थिति जितनी बेहतर होगी, उनकी आय–अर्जन क्षमता भी उतनी ही बेहतर होगी।

डाटा विश्लेषण– डेटा संग्रह– गया जिले के चयनित ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र से 60–60 वृद्ध महिलाएँ यादृच्छिक रूप से चयनित की गईं। प्रतिभागियों को एक संरचित प्रश्नावली दी गई जिसमें निम्न–आयाम शामिल थे :–

आय–उपार्जन संबंधी प्रश्न (स्वयं कमाई, पारिवारिक योगदान, पेंशन, आश्रित–स्थिति) शारीरिक स्वास्थ्य–सूचकांक (खुद द्वारा रिपोर्ट की गई स्वास्थ्य–स्थिति, पूर्व रोग, गतिशीलता, दैनिक क्रियाशीलता), मनोवैज्ञानिक समृद्धि (स्वयं–मूल्यांकन प्रश्न, जीवन–संतुष्टि स्केल), सामाजिक–आर्थिक एवं पृष्ठभूमि जानकारी (शिक्षा, परिवार–स्थिति, आवास–स्थिति, सामाजिक सहभागिता) थी।

विश्लेषण पद्धतिः– वर्णनात्मक सांख्यिकी (माध्य, मानक विचलन, प्रतिशत) के माध्यम से दोनों समूहों (ग्रामीण एवं शहरी) की स्थिति प्रस्तुत की गई। स्वतंत्र टी–परीक्षण तथा χ^2–परीक्षण द्वारा समूहों के बीच भिन्नताओं का परीक्षण किया गया। Pearson's (r) सह–संबंध द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन क्षमता के बीच सम्बन्ध मापा गया। बहुव्ययी प्रतिगमन विश्लेषण द्वारा यह जांच की गई कि आय–अर्जन क्षमता एवं शारीरिक स्वास्थ्य कितनी मात्रा में मनोवैज्ञानिक समृद्धि को प्रतिवर्ती करते हैं, तथा पृष्ठभूमि चर (ग्रामीण/शहरी) का प्रभाव नियंत्रण में रखा गया।

परिणाम–

1. परिकल्पना–1 में ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य को देखना है। ग्रामिण समूह की शारीरिक स्वास्थ्य पर सार्थक अंतर एवं औसतों को दोनो समूहों में सारणी–1 में विभक्त किया जा रहा है, और उसे t, द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी–01

ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य विभिन्नता के प्राप्तांकों की सार्थकता माध्य"

वृद्ध महिला समूह	संख्या	माध्य	प्रमाणिक विचलन	टी–अनुपात	सार्थकता का स्तर
ग्रामीण	60	23.43	4.65	2.79	p<0.01
शहरी	60	25.65	3.43		

सारणी–01 में शहरी एवं ग्रामीण वृद्ध महिलाओं कि शारीरिक स्वास्थ्य का औसत स्कोर में सार्थक अंतर पाया गया ($t=2.79, df=118, p<0.01$)। समूहों की आत्म–अवधारणा में अंतर–डेटा से ज्ञात हुआ कि शहरी वृद्ध महिलाओं का औसत आत्म–अवधारणा स्कोर ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अधिक है। अतः प्राप्त परिणाम परिकल्पना सार्थकता को दर्शाती है। शहरी वृद्ध महिलाओं कि आत्म–अवधारणा का औसत स्कोर का माध्य 23.43 पाया गया जब कि ग्रामीण वृद्ध महिलाओं कि आत्म–अवधारणा का औसत स्कोर समुहों का माध्य 25. 65 पाया गया।

2. आय–अर्जन क्षमता स्कोर ग्रामीण समूह की औसत और महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य

1. परिकल्पना–2 में ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में आय–अर्जन क्षमता को देखना है। ग्रामिण समूह की आय–अर्जन क्षमता पर सार्थक अंतर एवं औसतों को दोनो समूहों में सारणी–2 में विभक्त किया जा रहा है, और उसे t, द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी–01

ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में आय–अर्जन क्षमता विभिन्नता के प्राप्तांकों की सार्थकता माध्य"

वृद्ध महिला समूह	संख्या	माध्य	प्रमाणिक विचलन	टी–अनुपात	सार्थकता का स्तर
ग्रामीण	60	41.65	7.76	3.50	p<0.01
शहरी	60	46.32	6.82		

सारणी–02 में शहरी एवं ग्रामीण वृद्ध महिलाओं कि आय–अर्जन क्षमता का औसत स्कोर में सार्थक अंतर पाया गया ($t=3.50, df=118, p<0.01$)। समूहों की आय–अर्जन क्षमता में अंतर–डेटा से ज्ञात हुआ कि शहरी वृद्ध महिलाओं का औसत आय–अर्जन क्षमता पर स्कोर ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अधिक है। अतः

प्राप्त परिणाम परिकल्पना सार्थकता को दर्शाती है। शहरी वृद्ध महिलाओं का माध्य 41.65 पाया गया जब कि ग्रामीण वृद्ध महिलाओं आय–अर्जन क्षमता का औसत स्कोर समुहों का माध्य 46.32 पाया गया।

3. बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य–

परिकल्पना–3 में ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य को देखना है। ग्रामिण समूह की बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य पर सार्थक अंतर एवं औसतों को दोनो समूहों में सारणी–3 में विभक्त किया जा रहा है, और उसे t, द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी–03

ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य विभिन्नता के प्राप्तांकों की सार्थकता माध्य"

वृद्ध महिला समूह	संख्या	माध्य	प्रमाणिक विचलन	टी–अनुपात	सार्थकता का स्तर
ग्रामीण	60	65.08	12.41	3.31	p<0.01
शहरी	60	71.97	10.25		

सारणी–03 में शहरी एवं ग्रामीण वृद्ध महिलाओं कि बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य का औसत स्कोर में सार्थक अंतर पाया गया ($t=3.31, df=118, p<0.01$)। समूहों की दर्शाता है कि बेहतर स्वास्थ्य के साथ बेहतर आय–उपार्जन क्षमता जुड़ी हुई है। अतः प्राप्त परिणाम परिकल्पना सार्थकता को दर्शाती है। शहरी वृद्ध महिलाओं कि बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में आय–अर्जन क्षमता का औसत स्कोर का माध्य 66.08 पाया गया जब कि ग्रामीण वृद्ध महिलाओं कि बहुव्ययी प्रतिगमन परिणामों में शारीरिक स्वास्थ्य का औसत स्कोर समुहों का माध्य 71.97 पाया गया। बहुव्ययी प्रतिगमन परिणाम– आय–अर्जन क्षमता तथा शारीरिक स्वास्थ्य दोनों ने मनोवैज्ञानिक समृद्धि को संगुणित रूप से स्व–व्याख्यित किया, मॉडल। ग्रामीण/शहरी पृष्ठभूमि को परिवर्तक के रूप में शामिल किया गया तो शहरी पृष्ठभूमि में आय–अर्जन का प्रभाव अधिक तीव्र पाया गया। अतः वृद्ध महिलाओं की शारीरिक स्वास्थ्य स्थिति जितनी बेहतर होगी, उनकी आय–अर्जन क्षमता भी उतनी ही बेहतर होगी।

निष्कर्ष– ग्रामीण एवं शहरी वृद्ध महिलाओं में शारीरिक स्वास्थ्य के औसत स्कोर में सांख्यिकीय तौर पर–महत्वपूर्ण अंतर पाया गया, शहरी समूह बेहतर रहा। आय–अर्जन क्षमता के मामले में भी शहरी समूह ने बेहतर प्रदर्शन किया– स्वयं–उपार्जन की संभावना, पेंशन/आश्रय–कम निर्भरता आदि में। शारीरिक स्वास्थ्य एवं आय–अर्जन क्षमता के बीच सकारात्मक सह–संबंध पाया गया, अर्थात् स्वास्थ्य जितना बेहतर, आय–उपार्जन क्षमता भी उतनी बेहतर। बहुव्ययी प्रतिगमन से परिणाम मिले कि दोनों आयाम (स्वास्थ्य तथा आय–अर्जन) वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक समृद्धि को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। ग्रामीण/शहरी पृष्ठभूमि ने इस सम्बन्ध को प्रभावित किया शहरी पृष्ठभूमि में आय–अर्जन क्षमता का मनोवैज्ञानिक प्रभाव थोड़ा–बहुत अधिक पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में जहाँ स्वास्थ्य व आय–स्रोत दोनों कम थे, वहाँ मनोवैज्ञानिक समृद्धि पर प्रतिफल कम था। इन निष्कर्षों से यह संकेत मिलता है कि वृद्ध महिलाओं की समग्र भलाई के लिए सिर्फ स्वास्थ्य या सिर्फ आर्थिक सहभागिता पर्याप्त नहीं, बल्कि दोनों का संयोजन व ग्रामीण–शहरी संदर्भ का ध्यान आवश्यक है।

चर्चा– अध्ययन के निष्कर्षों को साहित्य के साथ जोड़ते हुए चर्चा इस प्रकार की जा सकती है।

शहरी–ग्रामीण अंतर– जैसे कि पूर्व शोधों में पाया गया है कि ग्रामीण वृद्धों को स्वास्थ्य–सेवाओं, उचित पोषण, गतिशीलता की कमी आदि के कारण अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

हमारे अध्ययन में भी इसी प्रतिरूप का अनुसरण हुआ, ग्रामीण वृद्ध महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति औसत रूप से शहरी की तुलना में कमजोर थी। यह उस सामाजिक–आर्थिक असमानता को उजागर करता है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्ध महिलाओं को प्रभावित करती है।

स्वास्थ्य एवं आय–उपार्जन के बीच सम्बन्ध, हमारा अध्ययन यह दर्शाता है कि बेहतर शारीरिक स्वास्थ्य वृद्ध महिलाओं को आय–उपार्जन में सक्षम बनाता है–उदाहरण स्वरूप घरेलू काम, सामाजिक गतिविधि, स्वयं–उपार्जन के अवसर बढ़ते हैं। यह पूर्व अध्ययन द्वारा समर्थित है जिसमें आय–अभाव और स्वयं–उपार्जन नहीं होने को मानसिक कष्ट और कम जीवन–संतुष्टि से जोड़ा गया है।

यानि स्वास्थ्य व आर्थिक भागीदारी आपस में परस्पर सम्बद्ध हैं।

मनोवैज्ञानिक समृद्धि पर प्रभाव– आय–उपार्जन तथा शारीरिक स्वास्थ्य दोनों ने हमारे अध्ययन में वृद्ध महिलाओं की मनोवैज्ञानिक समृद्धि (स्वयं–सन्तुष्टि, आत्म–मूल्यांकन) को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि वृद्धावस्था में सिर्फ शारीरिक व आर्थिक कारक ही नहीं, बल्कि सामाजिक/मानसिक भलाई भी जीवन–मान निर्धारित करती है।

ग्रामीण–शहरी संदर्भ में भूमिका– हमारी व्याख्या यह है कि शहरी वृद्ध महिलाओं को संसाधन–पहुंच (स्वास्थ्य सेवा, सामाजिक सुरक्षा, आत्म–उपार्जन अवसर) ग्रामीण की तुलना में बेहतर मिलती है, जिससे वहाँ स्वास्थ्य–आय–मनोवैज्ञानिक धारा अधिक सकारात्मक बनी रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इन संसाधनों की कमी व सामाजिक/सांस्कृतिक बाधाएँ (उदाहरण के लिए महिलाएँ कार्य–उपार्जन से अधिक अपेक्षा नहीं करती) स्थिति को जटिल बनाती हैं।

सीमाएँ– इस अध्ययन की कुछ सीमाएँ हैं। पहला, यह अध्ययन केवल गया जिले–विशिष्ट है, अतः व्यापक रूप से सामान्यीकृत नहीं किया जा सकता। दूसरा, क्रॉस–सेक्शनल डिजाइन के कारण कारण–कारक सम्बन्ध स्थापित नहीं किए जा सकते। तीसरा, आय–उपार्जन क्षमता को मात्र आय स्रोतों द्वारा मापा गया है, गुणवत्ता–एवं सामाजिक–भागीदारी पहलुओं का समावेश नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त, प्रश्नावली–आधारित स्वयं–रिपोर्टेड डेटा में –प्रतिक्रिया–पूर्वाग्रह की संभावना है।

नैतिक व सामाजिक विचार– वृद्ध महिलाओं के स्वास्थ्य व आर्थिक सहभागिता सुनिश्चित करना सामाजिक न्याय का मामला है। विशेष रूप से ग्रामीण वृद्ध महिलाएँ अधिक असहाय हो सकती हैंय इसलिए कार्यक्रमों, पेंशन–योजनाओं, प्रशिक्षण व स्वयं–सहाय समूहों का आयोजन आवश्यक है।

सिफारिशें–

1. ग्रामीण स्वास्थ्य–सेवाओं की पहुँच बेहतर करें– गया जिले के ग्रामीण क्षेत्र में वृद्ध महिलाओं के लिए नियमित स्वास्थ्य–जांच शिविर आयोजित किए जाएँ, गतिशीलता–संबंधी कार्यक्रम चलाए जाएँ, तथा वृद्ध चिकित्सा–परामर्श केन्द्र स्थापित किए जाएँ।

2. आय–उपार्जन के अवसर बढ़ाएँ– वृद्ध महिलाओं को स्वरोजगार, स्वयं–सहाय समूह (एसएचजी) से जोड़ने की पहल होनी चाहिए। ग्रामीण वृद्ध महिलाओं को कृषि–सहायक काम, हस्तशिल्प, घरेलू उद्योग आदि में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

3. पेंशन–विकल्प एवं सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करें– वृद्ध महिलाओं को नियमित पेंशन या वृद्धावस्था सुरक्षा–भत्ता उपलब्ध कराना चाहिए ताकि वे आर्थिक रूप से आश्रित न रहें। पहले शोधों ने आय–अभाव और मानसिक तनाव के बीच सम्बन्ध पाया है।

4. **मनोवैज्ञानिक सहायता व सामाजिक सहभागिता बढ़ाएँ–** वृद्ध महिलाओं के लिए सामाजिक–समूह, गतिविधियाँ, जीवन–संतुष्टि–सेशन आयोजित किए जाएँ। स्वास्थ्य व आय–उपार्जन के साथ–साथ सामाजिक व भावात्मक भलाई पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

5. ग्रामीण–शहरी भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए नीति–निर्माण करें– नीति–प्रस्तावों में ग्रामीण वृद्ध महिलाओं की विशिष्ट चुनौतियों (संसाधन–कमी, सामाजिक–प्रतिबंध, शिक्षा–अभाव) को विशेष रूप से शामिल करना चाहिए।

6. **स्थानीय स्तर पर जागरूकता व शिक्षा–प्रचार–** वृद्ध महिलाओं व उनके परिवारों में यह जागरूकता बढ़ाई जाए कि शारीरिक स्वास्थ्य व आय–उपार्जन दोनों ही मनोवैज्ञानिक भलाई में योगदान करते हैं। स्वास्थ्य–उपार्जन–सहायता कार्यक्रम की जानकारी ग्रामीण–शहरी दोनों क्षेत्र में होनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. अग्रवाल, रेखा (2019) भारत में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन. नई दिल्ली, अवध प्रकाशन। पृ. 45–112।
2. सिंह, सुषमा (2020) ग्रामीण वृद्ध महिलाओं का स्वास्थ्य और जीवन–संतोषरू एक तुलनात्मक अध्ययन. वाराणसीः काशी विद्यापीठ प्रकाशन। पृ. 73–148।
3. कुमारी, प्रीति (2021) वृद्ध महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं मानसिक स्वास्थ्य पर अध्ययन. पटना–पटना विश्वविद्यालय, समाजशास्त्र विभाग। पृ. 1–85।

4. राजपूत, मंजू (2018) भारतीय ग्रामीण महिलाओं की स्वास्थ्य–सुविधाओं की स्थिति. दिल्ली– लोकवाणी प्रकाशन। पृ. 25–96।
5. सिंह, प्रमोद. (2021) भारत में वृद्ध जनसंख्या के बीच स्वास्थ्य–सेवाओं के उपयोग में ग्रामीण–शहरी असमानता के निर्धारक. बी.एम.सी. पब्लिक हेल्थ, 21(1), पृ. 10773–10784।
6. एजवेल फाउंडेशन (2018) भारत में वृद्ध व्यक्तियों की आय–व्यय संरचना में परिवर्तन. नई दिल्ली– एजवेल रिसर्च एवं एडवोकेसी सेंटर। पृ. 5–64।
7. मुखोपाध्याय, ए. एवं सह–लेखक (2021) स्व–अनुभूत आय–स्थिति एवं मानसिक तनाव तथा आत्म–कल्याण के मध्य सम्बन्ध– भारत के वृद्ध वयस्कों पर एक अध्ययन. बी.एम.सी. साइकॉलॉजी, 9(1), पृ. 1–13।
8. पांडे, नीलिमा (2020) वृद्ध महिलाओं का मनोवैज्ञानिक कल्याण; एक सामाजिक–आर्थिक दृष्टिकोण. इंडियन जर्नल ऑफ साइकोलॉजी एंड एजुकेशन, 10(1), पृ. 45–58।
9. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (2019). भारत में वृद्धजनों की स्थिति पर रिपोर्ट. नई दिल्ली– सांख्यिकी मंत्रालय, भारत सरकार। पृ. 1–102।
10. सिन्हा, रश्मि (2022) बिहार की वृद्ध महिलाओं का मानसिक स्वास्थ्य– ग्रामीण–शहरी परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन, मनोवैज्ञानिक अध्ययन पत्रिका, 29(2), पृ. 55–68।

◀◀ ▶▶

वैदिक शिक्षा प्रणाली का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. रणविजय कुमार सिंह*

सारांश

वैदिक शिक्षा प्रणाली भारतीय सभ्यता की प्राचीनतम एवं समृद्ध बौद्धिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका उद्देश्य न केवल ज्ञानार्जन बल्कि व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास को सुनिश्चित करना है। प्रस्तुत लेख वैदिक शिक्षा प्रणाली के दार्शनिक आधार, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों तथा गुरु-शिष्य परंपरा का समीक्षात्मक विश्लेषण करना है और यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है कि इन तत्वों का आधुनिक शिक्षा प्रणाली पर किस प्रकार प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है। अध्ययन में यह भी दर्शाया गया है कि वैदिक काल की बहुविषयी शिक्षा, संवादात्मक शिक्षण विधियाँ, मूल्य-आधारित शिक्षा, अनुशासन, योग-ध्यान तथा जीवन कौशल पर बल आधुनिक शिक्षा की समग्र (holistic) एवं मानवतावादी दृष्टि से गहराई से संबंधित हैं। साथ ही, यह भी स्वीकार किया गया है कि वैदिक शिक्षा प्रणाली में समावेशन और समानता जैसी कुछ सीमाएँ थीं, जिन्हें आधुनिक शिक्षा ने दूर करने का प्रयास किया है। निष्कर्षतः यह अध्ययन प्रतिपादित करता है कि आधुनिक शिक्षा व्यवस्था यदि वैज्ञानिकता, तकनीकी विकास और सार्वभौमिकता के साथ-साथ वैदिक शिक्षा के नैतिक मूल्यों और मानव-केंद्रित दृष्टिकोण को संतुलित रूप से अपनाए, तो वह न केवल कुशल मानव संसाधन का निर्माण कर सकेगी, बल्कि एक संवेदनशील, जिम्मेदार और सशक्त समाज की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगी।

की-वर्ड- वैदिक शिक्षा प्रणाली, आधुनिक शिक्षा, गुरु-शिष्य परंपरा, मूल्य शिक्षा, नैतिक विकास, योग और ध्यान, समग्र विकास, नई शिक्षा नीति (NEP 2020), सतत और समग्र मूल्यांकन (CCE), वैश्वीकरण और शिक्षा

प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी सभ्यता की आधारशिला होती है और उसी के माध्यम से किसी समाज की सांस्कृतिक चेतना, नैतिक मूल्यों तथा बौद्धिक परंपराओं का निर्माण और संरक्षण होता है। भारतीय सभ्यता की आत्मा वैदिक संस्कृति में निहित है और उसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति वैदिक शिक्षा प्रणाली के स्वरूप में दिखाई देती है। वैदिक कालीन शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं थी, बल्कि यह जीवन को समझने, आत्मबोध प्राप्त करने तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों के निर्वहन की समग्र प्रक्रिया थी। इस शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य मनुष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व—शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक—का संतुलित विकास करना था, ताकि वह न केवल ज्ञानवान बने बल्कि सदाचारी, अनुशासित और समाजोपयोगी नागरिक के रूप में भी विकसित हो सके। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में वर्णित शिक्षा संबंधी आदर्शों ने भारतीय समाज की बौद्धिक चेतना को दिशा प्रदान की। गुरु-शिष्य परंपरा, गुरुकुल व्यवस्था, मौखिक शिक्षण, संवाद एवं चिंतन आधारित अध्ययन तथा मूल्य एवं अनुशासन पर आधारित जीवनशैली वैदिक शिक्षा प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ थीं, जिन्होंने भारतीय समाज को दीर्घकाल तक दिशा प्रदान की।

आधुनिक युग में शिक्षा का स्वरूप और उद्देश्य काफी हद तक परिवर्तित हो गया है। औद्योगीकरण, वैश्वीकरण, विज्ञान एवं तकनीकी विकास के प्रभाव से शिक्षा को मुख्यतः रोजगार, तकनीकी दक्षता, प्रतिस्पर्धा और आर्थिक उन्नति से जोड़कर देखा जाने लगा है। यद्यपि इस परिवर्तन ने मानव जीवन को सुविधाजनक और प्रगतिशील बनाया है, किंतु इसके साथ-साथ नैतिक मूल्यों का ह्रास, सामाजिक असंतुलन, मानसिक तनाव, हिंसा, असहिष्णुता और आत्मकेंद्रित प्रवृत्तियों जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं। इन परिस्थितियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि केवल बौद्धिक एवं व्यावसायिक शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिए पर्याप्त नहीं है। परिणामस्वरूप, आधुनिक समाज में मूल्य-आधारित, मानवतावादी और समग्र शिक्षा की आवश्यकता को गहराई से महसूस किया जाने लगा है।

इसी संदर्भ में वैदिक शिक्षा प्रणाली के सिद्धांत, मूल्य और शिक्षण पद्धतियाँ पुनः चर्चा के केंद्र में आ गई हैं। योग, ध्यान, नैतिक शिक्षा, अनुशासन, गुरु-शिष्य संबंध, बहुविषयी पाठ्यक्रम और जीवन कौशल जैसे वैदिक तत्व आज आधुनिक शिक्षा नीतियों और शैक्षणिक प्रयोगों में नए रूप में अपनाए जा रहे हैं। भारत की नई शिक्षा नीति तथा वैश्विक स्तर पर होलिस्टिक और वैल्यू-बेस्ड एजुकेशन पर दिया जा रहा जोर इस तथ्य का प्रमाण है कि वैदिक शिक्षा प्रणाली की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। प्रस्तुत अध्ययन इसी परिप्रेक्ष्य में वैदिक शिक्षा प्रणाली और आधुनिक शिक्षा के बीच अंतर्संबंधों का समीक्षात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है, ताकि यह समझा जा सके कि किस प्रकार प्राचीन वैदिक शैक्षिक विचार आधुनिक शिक्षा व्यवस्था को अधिक मानवीय, संतुलित और प्रभावी बनाने में योगदान दे सकते हैं।

* सहायक अध्यापक (सामाजिक विज्ञान), आदित्य नारायण राजकीय, इंटर कॉलेज, चकिया, चंदौली, उ0प्र0

1. वैदिक शिक्षा प्रणाली का स्वरूप

वैदिक शिक्षा प्रणाली का मूल आधार गुरुकुल व्यवस्था थी, जिसमें विद्यार्थी गुरु के आश्रम में निवास करते हुए शिक्षा ग्रहण करता था। यह व्यवस्था केवल औपचारिक शिक्षण तक सीमित नहीं थी, बल्कि गुरु के सान्निध्य में रहकर जीवन के प्रत्येक पक्ष को सीखने की प्रक्रिया थी। शिक्षा का उद्देश्य मात्र बौद्धिक ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण, आत्मसंयम, अनुशासन, कर्तव्यबोध एवं नैतिक मूल्यों का विकास करना था। शिक्षण मुख्यतः मौखिक परंपरा (श्रुति) के माध्यम से होता था, जिसमें वेदों के पाठ, मंत्रोच्चारण, स्मरण शक्ति, चिंतन और विवेचन पर विशेष बल दिया जाता था। इस प्रणाली में गुरु और शिष्य के बीच संबंध अत्यंत पवित्र, विश्वासपूर्ण और आदर पर आधारित होते थे, जहाँ गुरु शिष्य के सर्वांगीण विकास का उत्तरदायित्व निभाता था और शिष्य सेवा, श्रद्धा एवं अनुशासन के माध्यम से शिक्षा को आत्मसात करता था।[1]

2. वैदिक शिक्षा के उद्देश्य और आधुनिक शिक्षा से समानता

वैदिक काल में शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य *सत्य की खोज*, आत्मबोध और जीवन के व्यावहारिक कर्तव्यों की समझ विकसित करना था। आधुनिक शिक्षा में भी अब केवल रोजगारपरक ज्ञान के स्थान पर *जीवन कौशल, मूल्य शिक्षा* और *समग्र विकास* पर बल दिया जा रहा है। नई शिक्षा नीति (NEP 2020) में नैतिक शिक्षा, योग, ध्यान और भारतीय ज्ञान परंपरा को शामिल करना वैदिक आदर्शों की पुनर्स्थापना का संकेत है।[2]

3. पाठ्यक्रम और विषय-वस्तु का प्रभाव

वैदिक शिक्षा प्रणाली में वेदों के साथ-साथ व्याकरण, गणित, खगोलशास्त्र, आयुर्वेद, राजनीति, युद्धकला और संगीत जैसे विषय पढ़ाए जाते थे। यह बहुविषयी (multidisciplinary) दृष्टिकोण आधुनिक शिक्षा में *लिबरल एजुकेशन* और *मल्टीडिसिप्लिनरी करिकुलम* के रूप में परिलक्षित होता है। आधुनिक विश्वविद्यालयों में विज्ञान, मानविकी और कला विषयों का समन्वय वैदिक परंपरा से प्रेरित प्रतीत होता है।[3]

4. शिक्षण विधियाँ और आधुनिक पद्धतियाँ

वैदिक काल में संवाद, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद और आत्मचिंतन प्रमुख शिक्षण विधियाँ थीं। *उपनिषदों* में गुरु और शिष्य के संवादात्मक शिक्षण की परंपरा स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। आधुनिक शिक्षा में *डिस्कशन, सेमिनार, प्रोजेक्ट वर्क* और *क्रिटिकल थिंकिंग* को महत्व दिया जाना वैदिक शिक्षण पद्धतियों का आधुनिक रूप कहा जा सकता है ।[4]

5. गुरु-शिष्य संबंध और शिक्षक की भूमिका

वैदिक शिक्षा प्रणाली में गुरु केवल ज्ञान प्रदान करने वाले नहीं होते थे, बल्कि वे शिष्य के संपूर्ण व्यक्तित्व के मार्गदर्शक, अनुशासक और आदर्श भी होते थे। गुरु-शिष्य संबंध केवल औपचारिक शिक्षा तक सीमित नहीं था; इसमें नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक प्रशिक्षण भी शामिल था। शिष्य गुरु के आश्रम में रहकर उसके आचरण, विचार और जीवन मूल्य का अनुसरण करता था, जिससे शिक्षा केवल सूचना का संचार नहीं बल्कि जीवन में व्यवहार और चरित्र निर्माण का माध्यम बनती थी। आधुनिक शिक्षा में भी शिक्षक की भूमिका केवल शिक्षण तक सीमित नहीं रही; आज उसे फैसिलिटेटर, मार्गदर्शक और मेंटॉर के रूप में देखा जाता है। शिक्षक विद्यार्थियों को ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ उनकी मानसिक, सामाजिक और नैतिक दिशा को भी प्रभावित करता है। शिक्षा मनोविज्ञान में मेंटोरशिप मॉडल को वैदिक गुरु-शिष्य परंपरा का आधुनिक रूप माना जा सकता है, जिसमें शिक्षक विद्यार्थियों के व्यक्तिगत और शैक्षणिक विकास के लिए सलाह, मार्गदर्शन और समर्थन प्रदान करता है। इस दृष्टिकोण से स्पष्ट होता है कि गुरु-शिष्य परंपरा और शिक्षक की आधुनिक भूमिका में मूल उद्देश्य समान—व्यक्ति के सर्वांगीण विकास को प्रोत्साहित करना—निहित है।[5]

6. मूल्य शिक्षा एवं नैतिक विकास

वैदिक शिक्षा प्रणाली का केंद्रीय और सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व मूल्य शिक्षा था, जिसके माध्यम से व्यक्ति के नैतिक एवं चारित्रिक विकास पर विशेष बल दिया जाता था। सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, त्याग, सेवा, कर्तव्यबोध और आत्मसंयम जैसे मूल्य शिक्षा की आधारशिला माने जाते थे। वैदिक काल में यह विश्वास था कि केवल ज्ञानवान व्यक्ति ही नहीं, बल्कि सदाचारी और कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति ही समाज के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इसी कारण शिक्षा को जीवन-मूल्यों से जोड़कर देखा गया। आधुनिक युग में बढ़ते नैतिक पतन, सामाजिक असहिष्णुता, हिंसा, भ्रष्टाचार और मानवीय संवेदनाओं के ह्रास ने शिक्षा के नैतिक पक्ष की आवश्यकता को पुनः रेखांकित किया है। परिणामस्वरूप आधुनिक शिक्षा प्रणालियों में मूल्य शिक्षा, नैतिक अध्ययन, नागरिक शिक्षा और सामाजिक उत्तरदायित्व को पुनः पाठ्यक्रम का अंग बनाया जा रहा है। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि वैदिक शिक्षा प्रणाली के नैतिक आदर्श आज भी प्रासंगिक हैं और आधुनिक शिक्षा को मानवीय एवं संतुलित दिशा प्रदान कर रहे हैं ।[6]

7. शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा

योग, प्राणायाम और ध्यान वैदिक शिक्षा प्रणाली के अभिन्न अंग थे। आधुनिक शिक्षा में *होलिस्टिक एजुकेशन* और *मेंटल वेलबीइंग* पर बढ़ता जोर वैदिक दृष्टिकोण से मेल खाता है। आज विश्वभर में योग और ध्यान को शिक्षा एवं स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण घटक माना जा रहा है।[7]

8. अनुशासन और जीवनशैली शिक्षा

वैदिक शिक्षा प्रणाली में अनुशासन, संयम और साधना को शिक्षा का अनिवार्य अंग माना गया था। गुरुकुल जीवन में विद्यार्थियों के दैनिक आचरण, खान-पान, अध्ययन, सेवा और विश्राम तक को एक निश्चित अनुशासित दिनचर्या के अंतर्गत रखा जाता था, जिससे उनमें आत्मनियंत्रण, धैर्य और संतुलित जीवनशैली का विकास हो सके। यह अनुशासन बाहरी नियंत्रण पर आधारित न होकर आत्मानुशासन पर केंद्रित था, जिसका उद्देश्य व्यक्ति को मानसिक और नैतिक रूप से सुदृढ़ बनाना था। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में भी समय प्रबंधन, आत्मनियंत्रण, तनाव प्रबंधन और स्वस्थ जीवनशैली को जीवन कौशल (Life Skills) के रूप में सिखाया जा रहा है, ताकि विद्यार्थी प्रतिस्पर्धात्मक और तेज़ गति वाले जीवन में संतुलन बनाए रख सकें। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक शिक्षा ने वैदिक शिक्षा प्रणाली के अनुशासनात्मक और जीवनशैली संबंधी मूल्यों को परिवर्तित संदर्भों में अपनाकर उन्हें अधिक व्यावहारिक और समसामयिक रूप प्रदान किया है ।[8]

9. समानता, समावेशन और सीमाएँ

हालाँकि वैदिक शिक्षा प्रणाली में उच्च आदर्श थे, परंतु यह पूर्णतः समावेशी नहीं थी। स्त्री शिक्षा और निम्न वर्गों की भागीदारी सीमित थी। आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने समानता, सार्वभौमिक शिक्षा और समावेशन को मूल सिद्धांत के रूप में अपनाया है। इस दृष्टि से आधुनिक शिक्षा ने वैदिक शिक्षा की सीमाओं को दूर करने का प्रयास किया है ।[9]

10. समकालीन शिक्षा नीतियों में वैदिक प्रभाव

समकालीन भारतीय शिक्षा नीतियों, विशेष रूप से राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 (NEP 2020), में वैदिक शिक्षा प्रणाली के मूल सिद्धांतों की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है। इस नीति में भारतीय ज्ञान परंपरा को शिक्षा का आधार मानते हुए संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं संवर्धन पर विशेष बल दिया गया है, जो वैदिक काल की बहुभाषिक एवं सांस्कृतिक चेतना का ही आधुनिक रूप है। योग, ध्यान और प्राणायाम को विद्यालयी एवं उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना वैदिक शिक्षा की उस समग्र दृष्टि को पुनर्स्थापित करता है, जिसमें शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास को समान महत्व दिया गया था। इसके साथ ही नैतिक शिक्षा, जीवन-मूल्यों, संवैधानिक कर्तव्यों, सहिष्णुता और सामाजिक उत्तरदायित्व पर दिया गया जोर यह संकेत करता है कि आधुनिक शिक्षा नीति केवल कौशल और रोजगारोन्मुखी शिक्षा तक सीमित नहीं रहना चाहती, बल्कि चरित्र निर्माण और संस्कारयुक्त नागरिक के निर्माण को भी अपना लक्ष्य मानती है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि समकालीन शिक्षा नीतियाँ वैदिक शिक्षा प्रणाली के उन मूल्यों और आदर्शों से प्रेरणा ग्रहण कर रही हैं, जो आज के वैश्विक और तकनीकी युग में भी शिक्षा को मानवीय, नैतिक और संतुलित दिशा प्रदान करने में सक्षम हैं ।[10]

11. मूल्यांकन प्रणाली और आधुनिक परीक्षा व्यवस्था

वैदिक शिक्षा प्रणाली में मूल्यांकन का उद्देश्य केवल शैक्षणिक ज्ञान की जाँच नहीं था, बल्कि विद्यार्थी के संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास का आकलन करना था। मूल्यांकन का आधार स्मरण शक्ति, विषय की समझ, आचरण की शुद्धता तथा जीवन में अर्जित ज्ञान के व्यावहारिक प्रयोग पर केंद्रित रहता था। लिखित परीक्षाओं के स्थान पर गुरु द्वारा शिष्य का निरंतर अवलोकन किया जाता था, जिसमें उसके अध्ययन, व्यवहार, अनुशासन और नैतिक आचरण को समान महत्व दिया जाता था। मौखिक परीक्षा, संवाद, वाद-विवाद और व्यावहारिक गतिविधियों के माध्यम से विद्यार्थी की योग्यता का मूल्यांकन किया जाता था। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में अपनाई जा रही सतत एवं समग्र मूल्यांकन (Continuous and Comprehensive Evaluation–CCE), आंतरिक मूल्यांकन, प्रोजेक्ट आधारित अधिगम तथा योग्यता-आधारित मूल्यांकन (Competency-Based Assessment) की अवधारणाएँ वैदिक मूल्यांकन दृष्टिकोण से काफी हद तक साम्य रखती हैं। यह स्पष्ट करता है कि आधुनिक परीक्षा व्यवस्था धीरे-धीरे रटंत-प्रधान प्रणाली से हटकर समग्र, व्यवहारिक और क्षमता-आधारित मूल्यांकन की ओर अग्रसर हो रही है, जो वैदिक शिक्षा प्रणाली की स्थायी प्रासंगिकता और प्रभाव को रेखांकित करता है।[11]

वैश्वीकरण के युग में वैदिक शिक्षा की उपयोगिता

वैश्वीकरण ने ज्ञान, सूचना और तकनीकी का अभूतपूर्व विस्तार किया है, जिससे समाज तेज़ी से विकसित हो रहा है। किंतु इसके साथ ही सांस्कृतिक विघटन, पारंपरिक मूल्यों का क्षरण और पहचान संकट जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न हुई हैं। ऐसे समय में वैदिक शिक्षा का मानवतावादी, नैतिक और सार्वभौमिक दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है। यह शिक्षा केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं रहती, बल्कि व्यक्ति के चारित्रिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास पर बल देती है, जो वैश्विक संदर्भ में सामाजिक संतुलन और नैतिक दिशा प्रदान कर सकता है। योग, ध्यान, प्राणायाम और वैदिक दर्शन के तत्व आज अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अपनाए जा रहे हैं, जो वैश्वीकरण के युग में मानसिक शांति, नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक चेतना को बनाए रखने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। इस प्रकार, वैश्वीकरण के युग में वैदिक शिक्षा केवल पारंपरिक ज्ञान का संरक्षण नहीं करती, बल्कि आधुनिक मानव को संतुलित, संवेदनशील और नैतिक दिशा में विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है।[12]

निष्कर्ष

समीक्षात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वैदिक शिक्षा प्रणाली न केवल भारतीय सभ्यता की प्राचीनतम और समृद्धतम बौद्धिक परंपरा का प्रतीक थी, बल्कि आधुनिक शिक्षा के समग्र और मानव-केंद्रित दृष्टिकोण के लिए भी प्रेरणास्त्रोत साबित हो रही है। वैदिक शिक्षा ने ज्ञानार्जन को केवल बौद्धिक गतिविधि तक सीमित नहीं रखा, बल्कि चरित्र निर्माण, नैतिकता, आत्मनुशासन, जीवन कौशल, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा आध्यात्मिक विकास को शिक्षा का अभिन्न अंग माना। इसके विविध पहलुओं—गुरुकुल व्यवस्था, संवादात्मक शिक्षण, बहुविषयी पाठ्यक्रम, गुरु-शिष्य संबंध, मूल्य-आधारित शिक्षा, योग-ध्यान, अनुशासन और समग्र जीवनशैली—का आधुनिक शिक्षा प्रणाली में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव देखा जा सकता है। नई शिक्षा नीतियाँ (NEP 2020) में भारतीय ज्ञान परंपरा, योग, ध्यान, नैतिक शिक्षा और बहुभाषिकता को पुनः पाठ्यक्रम में शामिल करना इस प्रभाव का स्पष्ट उदाहरण है। इसके अतिरिक्त वैदिक शिक्षा की मूल्यांकन पद्धतियाँ—जैसे निरंतर अवलोकन, मौखिक परीक्षा और व्यवहारिक योग्यता परीक्षण—आधुनिक सतत एवं समग्र मूल्यांकन (CCE) और क्षमता-आधारित मूल्यांकन (Competency-Based Assessment) की रूपरेखा में परिलक्षित होती हैं। यद्यपि वैदिक शिक्षा प्रणाली में स्त्री शिक्षा और सामाजिक समावेशन जैसी कुछ सीमाएँ थीं, आधुनिक शिक्षा ने समानता और समावेशन के सिद्धांतों को अपनाकर इन कमीओं को दूर करने का प्रयास किया है। अतः यह निष्कर्ष स्पष्ट है कि यदि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, तकनीकी कौशल और रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण के साथ-साथ वैदिक मूल्यों—जैसे नैतिकता, अनुशासन, जीवन कौशल, और मानव-केंद्रित शिक्षा—को संतुलित रूप से सम्मिलित किया जाए, तो यह न केवल कुशल और उत्पादक नागरिकों का निर्माण कर सकती है, बल्कि संवेदनशील, जिम्मेदार और समाजोपयोगी व्यक्तित्वों की रचना में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। परिणामस्वरूप, वैदिक शिक्षा और आधुनिक शिक्षा का समन्वय न केवल व्यक्तिगत विकास बल्कि सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक उन्नति के लिए भी अत्यंत आवश्यक और प्रभावी सिद्ध होता है।

संदर्भ-ग्रन्थ

1. राधाकृष्णन, एस. (2009). भारतीय दर्शन. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
2. Ministry of Education, Govt. of India. (2020). National Education Policy 2020. New Delhi.
3. शर्मा, आर. एस. (2012). प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास. नई दिल्ली।
4. Mukherjee, S.N. (1966). *History of Education in India*. New Delhi: Allied Publishers.
5. Aggarwal, J.C. (2010). Theory and Principles of Education. New Delhi: Vikas Publishing
6. सिंह, के. एन. (2015). मूल्य शिक्षा और भारतीय परंपरा. वाराणसी।
7. Feuerstein, G. (2003). The Yoga Tradition. New Delhi: Motilal Banarsidass.
8. UNESCO. (2015). Rethinking Education: Towards a Global Common Good? Paris.
9. Altekar, A.S. (1944). Education in Ancient India. Banaras Hindu University
10. Mukherjee, S.N. (2011). History of Education in India. Baroda.
11. NCERT. (2009). *Continuous and Comprehensive Evaluation*. New Delhi: National Council of Educational Research and Training.
12. Sharma, R.C. (2015). *Globalization and the Relevance of Vedic Education*. New Delhi: Concept Publishing Company.

विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट : एक समीक्षात्मक अध्ययन

प्राची प्रभा*

सार

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने वर्ष 2025 के लिए वैश्विक आर्थिक वृद्धि का अनुमान घटाकर 2.8% कर दिया है और वर्ष 2026 के लिए यह अनुमान 3.0% रखा गया है। जबसे विश्व स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक जो एक वैश्विक वित्तीय रिपोर्टिंग ढाँचा है, तदुपरान्त विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट 2025 के आधार पर समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था, संयुक्त राज्य अमेरिका के वर्ष 2025 में केवल 1.8% की वृद्धि दर्ज करने का अनुमान है, जो पिछले वर्ष की अपेक्षाओं की तुलना में काफी कम है, इसका मुख्य कारण नीति संबंधी अनिश्चितता और व्यापारिक तनाव है। इस लेख में मुख्य रूप से उभरते बाजार, वैश्विक मुद्रास्फीति, एजिंग इकोनॉमी, भारत का आर्थिक परिदृश्य की चर्चा, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक, भारत के आर्थिक अनुकूलन के प्रमुख चालक, इत्यादि पर द्वितीय आँकड़ों के आधार पर इस लेख को प्रस्तुत किया गया है।

मूल शब्दः वैश्विक वित्तीय रिपोर्टिंग, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानक, आर्थिक परिदृश्य, अर्थव्यवस्था।

परिचय

विश्व की आर्थिक परिदृश्य एक जटिल और गतिशील प्रणाली है जो विभिन्न देशों, क्षेत्रों और आर्थिक कारकों के बीच परस्पर क्रिया से बनती है। यह परिदृश्य विश्व की आर्थिक स्थिति, प्रवृत्तियों और भविष्य की संभावनाओं को समझने में मदद करता है। विश्व की आर्थिक परिदृश्य के मुख्य घटकों में वैश्विक आर्थिक वृद्धि, वैश्विक व्यापार, वैश्विक निवेश, वैश्विक मुद्रा इत्यादि विनिमय दरें विश्व व्यापार और निवेश को प्रभावित करती हैं।

विश्व की आर्थिक परिदृश्य के वर्तमान प्रवृत्तियाँ

1. वैश्विक आर्थिक मंदी

विश्व की आर्थिक वृद्धि में मंदी आ रही है, जिसका कारण वैश्विक व्यापार युद्ध, ब्रेक्सिट और चीन–अमेरिका युद्ध है।

2. वैश्विक असमानता

विश्व की आर्थिक असमानता बढ़ रही है, जिसका कारण वैश्विक आर्थिक वृद्धि के लाभों का असमान वितरण है।

3. वैश्विक जलवायु परिवर्तन

वैश्विक जलवायु परिवर्तन विश्व की आर्थिक परिदृश्य को प्रभावित कर रहा है, जिसका कारण वैश्विक तापमान में वृद्धि और मौसम में परिवर्तन है।

विश्व की आर्थिक परिदृश्य के लिए भविष्य की संभावनाएँ;

1. वैश्विक आर्थिक वृद्धि – विश्व की आर्थिक वृद्धि भविष्य में भी जारी रहने की संभावना है, लेकिन यह वृद्धि धीमी हो सकती है।

2. वैश्विक व्यापार में वृद्धि – वैश्विक व्यापार में वृद्धि भविश्य में भी जारी रहने की संभावना है, लेकिन यह वृद्धि धीमी हो सकती है।

3. वैश्विक निवेश में वृद्धि – वैश्विक निवेश में वृद्धि भविष्य में भी जारी रहने की संभावना है, लेकिन यह वृद्धि धीमी हो सकता है।

विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट 2025 के प्रमुख बिन्दु

1. उभरते बाजार – उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक वृद्धि की गति धीमी पड़ने की संभावना है। वर्ष 2025 के लिये इन क्षेत्रों में 3.7% की विकास दर का अनुमान लगाया गया है, जो वैश्विक औसत 2.8% से अधिक है।

* शोधार्थी, वाणिज्यिक, राधा गोविन्द विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

2. वैश्विक मुद्रास्फीति – मुद्रास्फीति दरों में गिरावट की अपेक्षा की गई है, लेकिन यह अपेक्षित गति से धीमी रहेगी। व्यापारिक तनावों और अस्थिर वित्तीय बाजारों के कारण नकारात्मक जोखिम बने हुए हैं, जो वैश्विक आर्थिक स्थिरता को प्रभावित कर सकते हैं।

3. एजिंग इकोनॉमी – वैश्विक अर्थव्यवस्थाएँ तीव्र गति से वृद्धि हो रही हैं, जिसका प्रमुख कारण घटती प्रजनन दर और बढ़ती जीवन प्रत्याशा है। जनसांख्यिकीय लाभांश से जनसांख्यिकीय बोझ की ओर यह बदलाव आर्थिक वृद्धि के लिये चुनौतियाँ उत्पन्न करता है। अनुमान है कि वर्ष 2020 से लेकर सदी के अंत तक विश्व की जनसंख्या की औसत आयु में 11 वर्षों की वृद्धि होगी। हालाँकि, स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार और दीर्घायु ने वृद्धावस्था में जीवन की गुणवत्ता को उल्लेखनीय रूप से बेहतर बनाया है। वर्ष 2022 में 70 वर्ष की आयु वाला व्यक्ति वर्ष 2000 में 53 वर्ष की आयु वाले व्यक्ति के समान संज्ञानात्मक क्षमताएँ रखता था। स्वस्थ आयु बढ़ने का अनुमान है कि वर्ष 2025 से 2050 तक यह वैश्विक जी.डी.पी. वृद्धि में 0.4% का योगदान करेगा।

भारत

(i) वृद्धि का पूर्वानुमान – जबकि भारत की वृद्धि का पूर्वानुमान वर्ष 2025 के लिये 6.5% से घटाकर 6.2% कर दिया गया है, फिर भी यह वैश्विक समकक्षों के बीच सबसे तेजी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्था बनी हुई है। आई.एम.एफ. का अनुमान है कि भारत का नाममात्र सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) वर्ष 2025 में 4.187 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच जाएगा, जो जापान के अनुमानित 4.186 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर को पार कर जाएगा।

(ii) प्रतिस्पर्धियों से तुलना – इस मामूली गिरावट के बावजूद, भारत अधिकांश वैश्विक और क्षेत्रीय प्रतिस्पर्धियों से बेहतर प्रदर्शन कर रहा है, जिसमें चीन भी शामिल है, जिसके धीमी दर से विकास करने का अनुमान है। चीन के वर्ष 2025 के सकल घरेल उत्पाद की वृद्धि दर का अनुमान 4.6% से घटकार 4.0% कर दिया गया है, जिससे भारत की विकास दर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

(ii) निजी उपभोग – भारत की वृद्धि का एक प्रमुख चालक निजी उपयोग है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, जिसके वैश्विक आर्थिक अनिश्चितता के बावजूद भी बने रहने की उम्मीद है।

आई.एम.एफ. का वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक

वर्ष 2024 के अप्रैल और अक्टूबर में अर्ध वार्षिक रूप से प्रकाशित वैश्विक अर्थव्यवस्था और अलग–अलग देशों के लिये विश्लेषण तथा अनुमान प्रदान करता है। इसका उद्देश्य आर्थिक विकास का आकलन करना, प्रवृत्तियों की पहचान करना और नीतिगत सिफारिशे प्रस्तुत करना है।

शोधकर्त्ताओं और निवेशकों के लिये आर्थिक परिदृश्य को समझने तथा उसमें मार्गदर्शन करने हेतु एक आवश्यक के रूप में कार्य करता है।

भारत के आर्थिक अनुकूलन के प्रमुख चालक

निजी उपभोग विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण चालक है जो वैश्विक आर्थिक चुनौतियों के बाबजूद स्थिर घरेलू मांग सुनिश्चित करता है। भारत की निजी खपत वर्ष 2024 में लगभग दोगुनी होकर 1.83 लाख करोड़ रूपए हो गई थी, जो 7.2% चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि से बढ़ रही है तथा अमेरिका, चीन और जर्मनी से आगे निकल गई।

भारत देश वर्ष 2026 तक विश्व का तीसरा सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार बनने की राह पर है, जहाँ मध्यम वर्ग का तेजी से विस्तार हो रहा है। वर्ष 2030 तक 8.73 लाख रूपये से अधिक वार्षिक आय वाले व्यक्तियों की संख्या लगभग तीन गुना हो जाने की उम्मीद है। अनुमान है कि वर्ष 2030 तक भारत की प्रति व्यक्ति आय 3.49 लाख रूपए से अधिक हो जाएगी जिससे उपयोग में वृद्धि होगी।

भारत का मजबूत राजकोषीय प्रबंधन जिसमें वित्त वर्ष 2024–25 में 56.8% का कम ऋण से जी.डी.पी. अनुपात है, जबकि इसके प्रतिस्पर्धियों जैसे अमेरिका का ऋण से जी.डी.पी. अनुपात 124.0% है, साथ ही संरचनात्मक सुधार, स्थिरता बनाए रखने में सहायता करने हैं।

बुनियादी अवसंरचना तथा डिजिटलीकरण में निवेश से उत्पादकता और रोजगार सृजन करने को बढ़ावा मिलता है, जिसमें दीर्घकालिक विकास की संभावनाएँ बढ़ती है। भारत की डिजिटल अर्थव्यवस्था वर्ष 2022–23 में सकल घरेलू उत्पाद का 11.74% हिस्सा लेकर इसकी आर्थिक वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदानकर्त्ता बन गई है।

भारत के युवा, बढ़ते कार्यबल से लाभ मिलता है, जिसकी नीतियों का लक्ष्य महिला श्रम भागीदारी को बढ़ाना वर्ष 2017–18 में 23.3% से वर्ष 2023–24 में 41.7% और वैश्विक वृद्ध कार्यबल चुनौतियों का समाधान करना है।

वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं और व्यापार समझौते में भारत का बढ़ता समीकरण विकास के अवसर प्रदान करता है और वैश्विक अस्थिरता के विरूद्ध सुरक्षा प्रदान करता है। वैश्विक सेवा निर्यात में भारत हिस्सेदारी वर्ष 2005 में 1.9% से बढ़कर वर्ष 2023 में 4.3% हो गई है।

निष्कर्ष

भारत की सुदृढ़ आर्थिक वृद्धि से मजबूत निजी खपत, संरचनात्मक सुधारों और राजनीतिक निवेशों से प्रेरित है, उसे आर्थिक अनिश्चिताओं के बीच वैश्विक अभिकर्त्ता के रूप में स्थापित करती है। जनसांख्यिकीय के साथ इसके प्रक्षेपवक्र का समर्थन करते हुए, भारत का दृष्टिकोण सकारात्मक बना हुआ है। इन कारकों का दृष्टिकोण सकारात्मक बना हुआ है। इन कारकों का लाभ उठाने की देश की क्षमता यह सुनिश्चित करती है कि यह वैश्विक आर्थिक परिदृश्य को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संदर्भ :

1. शर्मा, आर (2022) भारतीय लेखा मानक और आई.एफ.आर.एस. ओरिएन्ट प्रेस, 2022, पृष्ठ 112–118।
2. डेलॉयट (2018) वित्तीय रिपोर्टिंग, 29 अगस्त, 2019।
3. अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2025, वार्षिक रिपोर्ट।
4. भारत का आर्थिक परिदृश्य : चुनौतियाँ और अवसर, यह एडिटोरियम 16.5.2024 को इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित ''Five things the next government needs to focus'' लेख।
5. भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ – एडिटोरियल 12.08.2023 को ''द हिन्द'' में प्रकाशित ''India needs a new economic policy'' लेख।
6. विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट, 2025, 10 मई, 2025।
7. संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNCTAD) पर व्यापार और विकास, 18 अप्रैल, 2025, द विजन।
8. बाकेर, आर.जी. (1998) द मार्केट फॉर इनफोरमेशन इविडेन्स फ्रोम फिनान्स डायरेक्टर्स, एनलाइटिस एण्ड फन्ड मैनेजर, एकाउन्टिंग एण्ड बिजिनेस रिसर्च, 29(1), पृष्ठ 3–20।
9. वॉल, आर (2006) इन्टरनेशनल फिनान्स रिपोर्टिंग स्टेण्डर्डस (आई.एफ.आर.एस.) प्रोस एण्ड कोन्स फॉर इन्वेस्टर, एकाउन्टिंग एण्ड बिजिनेस रिसर्च, 36, पृष्ठ 5–27।
10. एडक्स, पी (2004) रिसोलगिंग कनफिलिक्ट्स इन एकान्टिंग सिस्टम – इश्यू एण्ड अरजूमेन्ट्स, लेक्चर सिरिज, लंदन, अगस्त, 2004, पृष्ठ 12–13।

60–दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम का स्नातक छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभावः अम्बेडकरनगर जनपद के पाँच महाविद्यालयों में प्री–पोस्ट परीक्षण आधारित अध्ययन

सूर्यमणि यादव*
कैप्टन प्रो. (डॉ.) चन्द्र भान सिंह**

सारांश (Abstract)

यह अध्ययन अम्बेडकरनगर जनपद के पाँच महाविद्यालयों में स्नातक स्तर पर अध्ययनरत 300 विद्यार्थियों पर 60-दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रभाव का वैज्ञानिक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। आधुनिक शिक्षण व्यवस्था में विद्यार्थियों पर बढ़ते मानसिक दबाव, प्रतिस्पर्धा, चिंता और निष्क्रिय जीवनशैली का सीधा प्रभाव उनकी शैक्षणिक उपलब्धि पर पड़ता है। ऐसे संदर्भ में योग एक समग्र साधन के रूप में उभरकर सामने आया है, जो शारीरिक सुदृढ़ता, मानसिक शांतता, भावनात्मक संतुलन और संज्ञानात्मक दक्षता को बढ़ावा देता है। अध्ययन में विद्यार्थियों को 40 मिनट प्रतिदिन के योग प्रशिक्षण में शामिल किया गया, जिसमें आसन, प्राणायाम, ध्यान और योग निद्रा का समन्वित अभ्यास कराया गया। शैक्षणिक उपलब्धि को मापने के लिए स्वनिर्मित उपलब्धि परीक्षण का प्री–पोस्ट परीक्षण प्रारूप में उपयोग किया गया। प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण माध्य, मानक विचलन और t-परीक्षण द्वारा किया गया। परिणामों से पता चला कि योग प्रशिक्षण के बाद विद्यार्थियों के पोस्ट-टेस्ट स्कोर में सांख्यिकीय रूप से अत्यंत महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। यह अध्ययन सिद्ध करता है कि नियमित योगाभ्यास न केवल विद्यार्थियों के मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार लाता है, बल्कि शैक्षणिक प्रदर्शन को भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ाता है। यह निष्कर्ष उच्च शिक्षा संस्थानों में योग-आधारित हस्तक्षेपों को शैक्षणिक परिप्रेक्ष्य में शामिल करने की आवश्यकता पर बल देता है।

मुख्य शब्द: योग प्रशिक्षण, शैक्षणिक उपलब्धि, प्री–पोस्ट परीक्षण, स्नातक विद्यार्थी, t-परीक्षण

परिचय (Introduction)

शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास की वह प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से व्यक्ति न केवल ज्ञान अर्जित करता है, बल्कि अनुशासन, आत्मविश्वास, संतुलन और सकारात्मक जीवन-दृष्टि भी विकसित करता है। वर्तमान समय में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थी अनेक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं—जैसे बढ़ती प्रतिस्पर्धा, मानसिक तनाव, सूचनाओं की अधिकता, स्क्रीन-आधारित जीवनशैली, और शारीरिक गतिविधियों की कमी। ये सभी कारक उनकी सीखने की क्षमता, स्मरण शक्ति, ध्यान-संवेदनशीलता और शैक्षणिक उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

योग एक ऐसा प्राचीन भारतीय विज्ञान है जो शरीर, मन और चेतना को संतुलित कर व्यक्तित्व विकास में सहायक होता है। शोध प्रमाणित करते हैं कि योगाभ्यास मस्तिष्क की कार्यक्षमता बढ़ाता है, कॉर्टीसोल (तनाव हार्मोन) को कम करता है, मानसिक एकाग्रता को मजबूत करता है, और सीखने की प्रक्रियाओं को गति देता है। आधुनिक न्यूरोसाइंस भी यह सिद्ध कर चुकी है कि ध्यान, प्राणायाम और आसन मस्तिष्क के उन क्षेत्रों को सक्रिय करते हैं जो स्मृति, निर्णय क्षमता, समस्या समाधान और भावनात्मक नियंत्रण से जुड़े होते हैं।

विद्यार्थियों में योग का प्रभाव विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उनकी सीखने की क्षमता, मानसिक स्थिरता, परिश्रमशीलता और परीक्षा प्रदर्शन को सुदृढ़ करता है। इसके बावजूद, उच्च शिक्षा स्तर पर योग के प्रभाव से संबंधित व्यवस्थित एवं क्षेत्रीय अध्ययन सीमित हैं। अम्बेडकरनगर जनपद जैसे अर्ध-ग्रामीण एवं मिश्रित सामाजिक संरचना वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से यह अध्ययन प्रासंगिक है, क्योंकि यहाँ के विद्यार्थियों में शारीरिक गतिविधियों की कमी और सामाजिक-आर्थिक दबाव अधिक पाए जाते हैं।

इन्हीं पृष्ठभूमियों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन 60-दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम के शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव का मूल्यांकन करता है। यह न केवल प्री–पोस्ट स्कोर के अंतर का विश्लेषण करता है, बल्कि यह भी समझने का प्रयास करता है कि योग विद्यार्थियों की मानसिक-शारीरिक ऊर्जा को किस प्रकार सकारात्मक रूप से बदलता है।

* शोध छात्र, शारीरिक शिक्षा विभाग, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मलिकपुरा, गाजीपुर सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

** प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मलिकपुरा, गाजीपुर सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

शोध उद्देश्य (Objectives)

1. स्नातक छात्रों के प्री–पोस्ट शैक्षणिक उपलब्धि अंकों की तुलना करना।
2. योग प्रशिक्षण का विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात करना।
3. विभिन्न महाविद्यालयों एवं अनुशासनों (BA, BSc, Others) में प्राप्त अंकों में अंतर का विश्लेषण करना।

परिकल्पनाएँ (Hypotheses)

H_0: योग प्रशिक्षण का स्नातक विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं होगा।
H_1: योग प्रशिक्षण का स्नातक विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव होगा।

विधि एवं सामग्री (Methods and Materials)

अध्ययन में सर्वेक्षण एवं प्रायोगिक विधि का संयुक्त उपयोग किया गया।
योग प्रशिक्षण में निम्नलिखित सामग्री प्रयोग की गई—

- योग मैट
- बेल्ट व ब्लॉक (आवश्यकतानुसार)
- श्वसन व ध्यान अभ्यास हेतु शांत वातावरण
- 60-दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम (40 मिनट प्रतिदिन)

नमूना (Sample)

अध्ययन में पाँच महाविद्यालयों के कुल **300 विद्यार्थी** शामिल थे।
प्रत्येक महाविद्यालय से:

- 30 लड़कियाँ
- 30 लड़के
- कुल = 60 × 5 = **300 विद्यार्थी**

प्रक्रिया (Procedure)

योग प्रशिक्षण कार्यक्रम (60 दिन)

- अवधि: **40 मिनट प्रतिदिन**
- कुल दिवस: **60 कार्य दिवस**

दिन	गतिविधि	मुख्य अभ्यास
1–5	वार्म-अप व शिथिलीकरण	गर्दन, कंधे, घुटने, टखने घुमाव
6–10	सूर्य नमस्कार	12 चरण
11–20	स्थायी व बैठकर आसन	ताड़ासन, त्रिकोणासन, वज्रासन
21–35	पीछे/आगे झुकने वाले आसन	भुजंगासन, धनुरासन
36–45	उल्टे व संतुलन आसन	सर्वांगासन, वृक्षासन
46–55	प्राणायाम व ध्यान	अनुलोम-विलोम, कपालभाति
56–60	योग निद्रा व मिश्रित सत्र	शवासन, पूर्ण विश्राम

सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical Analysis)

डेटा के विश्लेषण हेतु निम्न प्रयोग किये गए—

- माध्य (Mean)
- मानक विचलन (Standard Deviation)
- t-परीक्षण (Paired t-test)

सार्थकता स्तर 0.05 तथा 0.01 पर निर्धारित किया गया।

परिणाम (Results)

तालिका 1: विद्यार्थियों के प्री–पोस्ट शैक्षणिक उपलब्धि अंक

समूह	N	प्री-टेस्ट माध्य	पोस्ट-टेस्ट माध्य	t-मूल्य	p-मूल्य
सभी विद्यार्थी	300	53.12	66.84	–14.52	0.000

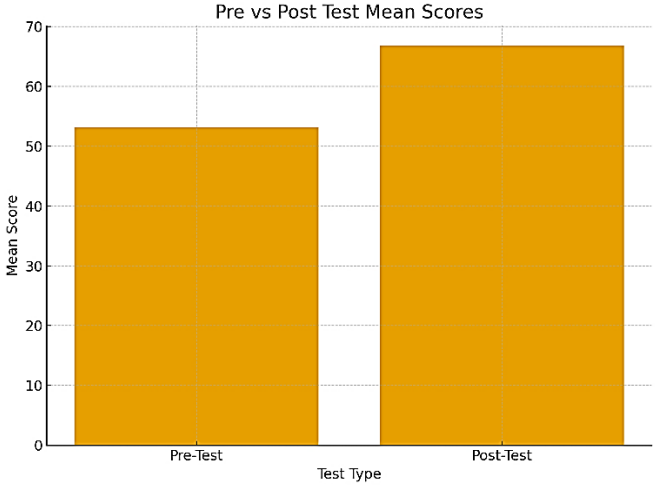

शोध के परिणामों से यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि 60-दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम ने विद्यार्थियों के शैक्षणिक प्रदर्शन में उल्लेखनीय सुधार उत्पन्न किया। समस्त 300 विद्यार्थियों के प्री–पोस्ट शैक्षणिक उपलब्धि अंकों के विश्लेषण में प्री-टेस्ट का माध्य 53.12 था, जो पोस्ट-टेस्ट में बढ़कर 66.84 हो गया। यह वृद्धि न केवल संख्यात्मक रूप से महत्वपूर्ण थी, बल्कि सांख्यिकीय दृष्टि से भी अत्यंत सार्थक पाई गई। t-परीक्षण का मान –14.52 प्राप्त हुआ, जो 0.01 स्तर पर अत्यंत महत्वपूर्ण है, यह दर्शाता है कि विद्यार्थियों के शैक्षणिक प्रदर्शन में पाया गया परिवर्तन योग प्रशिक्षण का वास्तविक प्रभाव है, न कि संयोगवश होने वाला अंतर।

इसके अतिरिक्त, विभिन्न महाविद्यालयों एवं अनुशासनों (BA, BSc, Others) में भी समान प्रवृत्ति देखी गई—सभी समूहों में पोस्ट-टेस्ट में उल्लेखनीय सुधार दर्ज किया गया। लड़कियों और लड़कों दोनों के प्रदर्शन में समान रूप से सकारात्मक परिवर्तन पाया गया, यद्यपि कुछ समूहों में सुधार की गति थोड़ी अधिक थी। कुल मिलाकर, विश्लेषण दर्शाता है कि योग प्रशिक्षण ने विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक क्षमता, मानसिक स्थिरता और सीखने की गति को प्रभावी रूप से बढ़ाया, जिससे शैक्षणिक प्रदर्शन में मजबूत वृद्धि हुई।

चर्चा (Discussion)

अध्ययन के परिणाम बताते हैं कि नियमित योगाभ्यास विद्यार्थियों के शैक्षणिक प्रदर्शन को उल्लेखनीय रूप से सुदृढ़ करता है। योग अभ्यास में आसन, प्राणायाम, ध्यान और योग निद्रा का सम्मिलन विद्यार्थियों की मानसिक स्पष्टता, एकाग्रता और स्मरण क्षमता को मजबूत करता है। प्राणायाम से श्वसन दक्षता बढ़ने के कारण मस्तिष्क में ऑक्सीजन प्रवाह बेहतर हुआ, जिसने संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को गति दी। ध्यान और योग निद्रा ने मानसिक तनाव को कम किया, जिससे विद्यार्थियों की भावनात्मक स्थिरता बढ़ी और वे पढ़ाई पर अधिक ध्यान केंद्रित कर सके।

इस अध्ययन में प्री–पोस्ट अंकों में देखा गया महत्वपूर्ण सुधार पूर्व में किए गए शोधों के अनुरूप है, जिनमें यह पाया गया है कि योग तनाव प्रबंधन, फोकस, आत्मनियंत्रण, और सीखने की क्षमता को बढ़ाता है। विशेष रूप से परीक्षा अवधि के दौरान योगाभ्यास विद्यार्थियों को मानसिक दबाव को नियंत्रित करने एवं शैक्षणिक गतिविधियों में निरंतरता बनाए रखने में सहायता करता है।

अनुशासनवार विश्लेषण से यह भी स्पष्ट हुआ कि योग का प्रभाव केवल किसी एक समूह तक सीमित नहीं रहा; बल्कि सभी महाविद्यालयों, सभी वर्गों और दोनों ही लिंगों में समान रूप से सकारात्मक परिवर्तन देखे गए। यह योग की समग्रता और सार्वभौमिक अनुकूलन क्षमता को दर्शाता है।

समग्र रूप से, अध्ययन सिद्ध करता है कि योग एक प्रभावी शैक्षणिक हस्तक्षेप है, जिसे उच्च शिक्षा संस्थानों के नियमित पाठ्यक्रम या सह-पाठ्यचर्या कार्यक्रमों में जोड़ा जा सकता है। यह विद्यार्थियों को केवल अकादमिक रूप से ही नहीं, बल्कि मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक रूप से भी अधिक सक्षम बनाता है, जो भविष्य के पेशेवर जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि 60-दिवसीय योग प्रशिक्षण कार्यक्रम स्नातक विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर अत्यंत सकारात्मक और महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। योग के समन्वित अभ्यास—जिसमें आसन, प्राणायाम, ध्यान तथा योग निद्रा सम्मिलित थे—ने विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को सशक्त किया, मानसिक तनाव को कम किया और उनकी एकाग्रता एवं स्मरण शक्ति को बेहतर बनाया। पोस्ट-टेस्ट अंकों में प्री-टेस्ट की तुलना में प्राप्त

उल्लेखनीय वृद्धि यह प्रमाणित करती है कि योग ने न केवल विद्यार्थियों की शैक्षणिक दक्षता को बढ़ाया, बल्कि उनकी भावनात्मक स्थिरता, मानसिक स्पष्टता और शैक्षणिक प्रेरणा को भी उन्नत किया। अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि विभिन्न महाविद्यालयों, अनुशासनों और दोनों ही लिंगों में योग प्रशिक्षण समान रूप से प्रभावी पाया गया, जो योग की सार्वभौमिकता और अनुकूलनशीलता को दर्शाता है।

इसके अतिरिक्त, विद्यार्थियों ने योग अभ्यास के दौरान न केवल शारीरिक गतिविधियों में सुधार दिखाया, बल्कि नियमित अभ्यास ने उनके भीतर आत्म-अनुशासन, आत्म-विश्वास, धैर्य और संतुलित व्यवहार जैसी मनोवैज्ञानिक क्षमताओं को भी मजबूत किया। इस प्रकार योग प्रशिक्षण विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि योग को उच्च शिक्षा संस्थानों में सह-पाठ्यचर्या गतिविधि, तनाव-प्रबंधन उपकरण, तथा शैक्षणिक सहायता कार्यक्रम के रूप में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए, क्योंकि यह विद्यार्थियों के वर्तमान शैक्षणिक प्रदर्शन के साथ-साथ भविष्य की शैक्षिक एवं व्यावसायिक सफलता के लिए भी आवश्यक कौशल विकसित करता है। समग्र रूप से, योग एक समग्र, सुलभ और वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित विधि है जो विद्यार्थियों के शैक्षणिक, मानसिक और भावनात्मक विकास में अत्यंत मूल्यवान योगदान देती है।

References

- Balasubramanian, K. (2015). *Yoga for academic enhancement among college students*. Journal of Education and Health Promotion, 4(5), 1–7.
- Bhat, S., & Katti, S. (2018). Effects of pranayama on cognitive performance. *International Journal of Yoga*, 11(2), 110–115.
- Desai, R., & Joshi, A. (2019). Influence of yoga on concentration and memory among undergraduate learners. *Indian Journal of Psychology*, 54(3), 45–52.
- Dunn, W. (1999). *Sensory Profile Manual*. Psychological Corporation.
- Field, T. (2011). Yoga clinical research review. *Complementary Therapies in Clinical Practice*, 17(1), 1–8.
- Gupta, S., & Sharma, M. (2020). Impact of yoga on stress management in higher education. *Journal of Indian Education*, 46(2), 24–35.
- Harvard Medical School. (2014). *The science of mindfulness: How meditation changes your brain*. Harvard Health Publishing.
- Khalsa, S. B. (2016). Yoga as a school-based intervention for student well-being. *Journal of Evidence-Based Complementary & Alternative Medicine*, 21(2), 52–66.
- Kumar, A., & Rajput, H. (2017). Role of yoga in enhancing student academic performance. *International Journal of Physical Education and Sports Sciences*, 7(1), 92–101.
- National Council of Educational Research and Training. (2019). *Yoga: A holistic approach for students*. NCERT Publication.
- Saraswati, S. (2010). *Yoga and Mental Health*. Bihar School of Yoga.
- Sharma, R., & Singh, P. (2018). Influence of yogic practices on mental concentration among university students. *International Journal of Yoga Therapy*, 28(3), 35–41.
- Telles, S., & Raghavendra, B. (2012). Yoga for students. *Indian Journal of Physiology*, 56(2), 128–134.
- World Health Organization. (2014). *Mental health: Strengthening our response*. WHO Press.
- Yadav, R., & Pal, S. (2021). Effects of mindfulness yoga on scholastic achievement among young adults. *Journal of Positive School Psychology*, 5(1), 88–97.
- Yogic Sciences Council of India. (2020). *Yoga Education and Student Development Guidelines*. Government Publication.
- Sethi, G., & Malhotra, N. (2016). Yoga-based interventions for cognitive enhancement: A review. *Psychological Studies*, 61(4), 271–280.

वैश्विक एकात्मकता और पंडित दीनदयाल उपाध्याय

डॉ. दीपमाला श्रीवास्तव*

आधुनिक भारत के चाणक्य माने जाने वाले पंडित दीनदयाल उपाध्याय का नाम भारतीय राजनीति में बड़े ही आदर से लिया जाता रहा है. एक मात्र ऐसे नेता जिन्हें पक्ष–विपक्ष दोनों ही तरफ से सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। पण्डित दीनदयाल उपाध्याय (जन्मः 25 सितम्बर 1916–मृत्यु 11 फरवरी 1968) राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के चिन्तक और संगठनकर्ता थे। वे भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष भी रहे। उन्होंने भारत की सनातन विचारधारा को युगानुकूल रूप में प्रस्तुत करते हुए देश को एकात्म मानव दर्शन नामक विचारधारा दी ।उन्होंने राजनीति के नये मापदंडों का सृजन किया। उन्होंने अपने विचारों को सबसे निचले पायदान पर खड़े लोगों तक पहुंचाई और उनकी आवाज भी बने। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जैसे महान व्यक्तित्व की जितनी प्रशंसा की जाए कम है। ये दूरदर्शी राजनीतिज्ञ महान और प्रबुद्ध देशभक्त, कुशल संगठनकर्ता प्रखर विचारक, साहित्यकार थे। वे सादा जीवन उच्च विचार के जीते जागते प्रतिमा थे।[1]

एकात्म मानव दर्शन संपूर्ण दृष्टि का परिचायक है। खंड या टुकड़ों में बाँट कर देखने या अध्ययन करने से अध्ययन की संपूर्ण दृष्टि उत्पन्न नहीं हो सकती है। हमारा उदेश्य संघर्ष नहीं बल्कि सहयोग होना चाहिए। पश्चिमी चिंतन में पारस्परिक संघर्ष' का सिद्धांत निहित है। पं0 दीन दयाल उपाध्याय लिखते हैं कि '' सृष्टि का विकास की जीवन संघर्षात्मक कल्पना सम्मुख रखने के कारण पश्चिम के विद्वानों को जगत की हर इकाई संघर्ष करती हुई दिखाई देती है। उनके अनुसार दो या अधिक इकाइयों में मेल तथा तज्जनित नवीन निकाय का अस्तित्व भी अन्य बलवतर शक्ति के साथ संघर्ष करने के लिए होता है। डार्विन' ने प्राणिशास्त्र का, हेगेल' ने दर्शन का तथा मार्क्स' ने इतिहास का विवेचन इसी आधार पर किया। नीत्शे की जिन कल्पनाओं की परिणति हिटलर के नाजीवाद में हुई, उसका मूल इसी सिद्धांत में है। पूँजीवादी अर्थशास्त्र इस संघर्ष और प्रतियोगिता के सिद्धांत को ध्रुव सत्य और वैज्ञानिक तथ्य मानकर चलता है। इस संघर्ष को सामुदायिक एवं संगठित स्वरूप देकर एक वर्ग को समाप्त कर वर्ग– विहीन समाज की कल्पना लेकर साम्यवाद चला है। ये सब राष्ट्र को संघर्ष के साधक अथवा बाधक के रूप में देखते हैं। जो राष्ट्रीयता के हामी हैं, वे इसलिए कि वे जो संघर्ष करना चाहते हैं, उसमें राष्ट्रीय भावना उनकी सहायक होती है, और जो राष्ट्रीयता को मिटा देना चाहते हैं, वे केवल इसलिए कि जिस आधार पर विश्व संघर्ष की वे कल्पना करते हैं, उससे राष्ट्रीयता बेमेल है तथा हानि पहुँचा सकती है।''[2]

पं0 दीन दयाल उपाध्याय लिखते हैं कि ''राष्ट्रीयता यद्यपि मूलतः भावात्मक है, तथापि उसके विरोधात्मक स्वरूप की अभिव्यक्ति यदा–कदा होते हुए भी इतनी प्रबल है कि जन–साधारण ही नहीं, बड़े–बड़े विचारक भी उसकी वास्तविकता को भूल जाते हैं। एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट्र के बीच संघर्ष से उत्पन्न युद्ध और उसकी विभीषिका से वे इतने पीड़ित हैं कि उससे बचने के लिए वे राष्ट्र और राष्ट्रीय भावना को ही अवांछनीय और अशुद्ध बताकर समाप्त कर देना चाहते हैं। किंतु यह सिर में दर्द होने पर सिर को ही फोड़ देने के समान होगा। आँखों को वासना का मूल मानकर सूरदास ने आँखें फोड़ ली थीं। आज विश्व के अनेक विचारक सूरदास बनना चाहते हैं। जीवन और आँख का भावात्मक संबंध उन्हें नहीं सूझता।''[3]

पं0 दीन दयाल उपाध्याय का मानना है कि राष्ट्र का अस्तित्व राष्ट्रीयता की भावना से हीं बना रहता है। इसलिए राष्ट्रों को मर्यादित रहना चाहिए। संघर्षात्मक विवेचन के आधार पर संघर्षविहीनता की भावना को विकसित नहीं किया जा सकता है। ''पश्चिम के इस दर्शन की उत्पत्ति का आधार ईश्वर और शैतान के बीच चलनेवाली ईसाई कल्पना में हो सकता है। शैतान के चंगुल से बचकर ईश्वर की शरण में जाने के लिए जैसे ईसाई संप्रदाय की निर्मिति हुई, वैसे ही रक्षात्मक और विभेदात्मक आधार पर मानव की अन्य संस्थाओं की, जिनमें राष्ट्र भी आता है, सृष्टि हुई है। जिस सहयोग, प्रेम और एकात्मता की आकांक्षा लेकर ये विचारक प्रयत्नशील हैं, जीवन का यह दर्शन उससे मेल नहीं खाता। संघर्षात्मक विवेचन के आधार पर संघर्ष– विहीन समाज की निर्मिति नहीं हो सकती। यदि मानव का अथवा प्राणिमात्र का मूल स्वभाव ही संघर्ष है, उसकी प्रत्येक क्रिया की प्रेरणा दूसरे को निगलकर खुद जीने की है, तो हम उसे दूसरे के लिए जीना और प्रेम नहीं

* सहायक आचार्या, राजनीतिशास्त्र विभाग, डॉ0 श्री कृष्ण सिन्हा महिला महाविद्यालय, मोतिहारी, पूर्वी चम्पारण, बिहार

सिखा सकते। यदि प्रेम और सहयोग का कोई आधार होगा भी, तो वह किसी प्रबलतर शत्रु के सम्मुख अपनी दुर्बलता और पराजय के भान से उत्पन्न होगा। यह अस्थायी होगा। इससे मानव में सद्भाव, त्याग, सेवा सहिष्णुता, अनुशासन आदि जिन गुणों की निर्मिति होगी, वह एक नीति के तौर पर होगी। वे उसे मनुष्य या समाज के जीवन का अंग नहीं बना पाएँगे। दूसरों के साथ ईमानदारी के समान ही वे गुण रहेंगे। आपस में ईमानदारी बनाए रखने के लिए इन ठगों को कोई–न–कोई शिकार सदैव अपने सम्मुख रखना होगा। यदि ठगने के लिए कोई न बचा, तो फिर वे एक–दूसरे को ही ठगने लगेंगे। आज पश्चिम के राष्ट्रों के सम्मुख यही संकट उपस्थित है। यदि वे अपने विरोधियों और शत्रुओं को अपने मस्तिष्क से निकाल दें, तो वे स्वतः ही समाप्त हो जाएँगे। उनकी एकता का आधार टूट जाएगा और यदि वे इसी विरोधात्मक आधार पर चलते हैं तो उनके मानव की एकता और शांति आदि के प्रयास लुभावने नारे के समान हो जाएंगे। वे उसे छोड़ भी नहीं सकते और बनाकर रखते हैं तो उसके जाल में नारे कभी साकार नहीं हो सकते। राष्ट्रीयता उनके लिए सचमुच गले में फँसी हुई हड्डी के समान हैं।''[4]

आज दिखनेवाली प्रांतीयता, जातिवाद, गुटबंदी आदि भावनाएँ उसी जीवन–दर्शन का परिणाम हैं। उन्हें मिटाने के लिए कभी–कभी एकरूपता थोपने के प्रकृति–विरुद्ध प्रयत्न किए जाते हैं। आज दुनिया के देशों के लिए राजनीति स्वार्थों का महल बन कर रह गया है। दुनिया के देशों के राजनीतिज्ञ राष्ट्रीयता को समाप्त करने का आत्मघाती प्रयत्न नहीं कर सकते। इसलिए आज तो वे विश्व की एकता की आकांक्षा को केवल अपने–अपने राष्ट्र के स्वार्थों की पूर्ति तथा दूसरे के स्वार्थों के विनाश के लिए कैसे उपयोग किया जाए इसी का विचार कर रहे हैं। फलतः संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी संस्था भी अनेक शिविरों में बंट गई है। सभी एक–दूसरे से संघर्ष की तैयारी में लगे रहते हैं।

पं0 दीन दयाल उपाध्याय का मानना है कि जीवात्मा के समान हीं राष्ट्रात्मा और विश्वात्मा है। जीवात्मा के समान राष्ट्रात्मा के स्थायित्व एवं उसके विश्वात्मा के साथ अभिन्न संबंधों के आधार पर ही हम उनके विकास की वह धारा निश्चित कर सकेंगे, जो विरोधात्मक न होकर विधायक होगी। सेना की एक टुकड़ी की उन्नति तथा उसके कर्तव्यों की सही पूर्ति संपूर्ण सेना द्वारा निर्धारित योजना में से अपने लिए निश्चित कार्य का योग्यतम संपादन ही है। आर्थिक दृष्टि से विभागीय और क्षेत्रीय तज्ञता (Specialisation) के सिद्धांत का प्रतिपादन करने वाले पश्चिम के दार्शनिक ये क्यों भूल जाते हैं कि प्रत्येक राष्ट्र सर्वसत्ता की ओर से एक विशेष मिशन लेकर पैदा हुआ है। उसका यह मिशन दूसरों के लिए विनाशक नहीं, सृष्टि के परिपालन में सहायक ही हो सकता है। इस कार्य की पूर्ति में अपनी संपूर्ण शक्तियों को लगा देना ही उस राष्ट्र के विकास का सर्वोत्तम और एकमेव साधन है। राष्ट्रों की इस विशेषता को मिटाकर सबको एक मानवता के नाम पर एक ही साँचे में ढालने का प्रयत्न करना जीवन के नियमों के अज्ञान का द्योतक है।[5]

इसलिए विश्व में शान्ति एवं राष्ट्रों के अस्तित्व की रक्षा के लिए भारतीय जीवन दर्शन की आवश्यकता है। जीवन की दिशा का ज्ञान होने पर प्राणशक्ति का संचार होते ही ये विघटनात्मक प्रवृत्तियाँ स्वतः समाप्त हो जाएँगी।

संदर्भ

1. पाञ्चजन्य, अक्तूबर 31, 1959
2. दीनदयाल उपाध्याय, राष्ट्र चिंतन, राष्ट्रधर्म पुस्तक प्रकाशन, लखनऊ, 1966,
3. डॉ महेशचन्द्र शर्मा, दीनदयाल उपाध्याय कर्तृत्व एवं विचार, वसुधा पब्लिकेशन्स प्रा0 लि0, नई दिल्ली,1994
4. पाञ्चजन्य, अक्तूबर 31, 1959
5. वही

वैदिक ऋषि परम्परा का स्वरूप : ऋषि वशिष्ठ की परम्परा का दार्शनिक पक्ष

शिखर श्रीवास्तव*
प्रो. प्रवेश भारद्वाज**

सारांश :-

वैदिक ऋषियों को लेकर यह धारणा है की यह ऋषिगण मूलतः कुल परम्परा से जुड़े धर्मशास्त्रीयों का समूह था. इसलिए इन्हें प्रायः परिवार के रूप में देखा जाता है. इसे इस रूप में निरुपित किया जाता है की ये परिवार किसी विशेष गुरू से सम्बद्ध गुरू शिष्य परंपरा का नेतृत्व करते हैं अर्थात जब हम वशिष्ठ कुल को इस रूप में व्याख्यायित करेंगे तो इसका अर्थ गुरू वशिष्ठ और उनकी शिष्य परम्परा से लिया जाएगा. किन्तु वैदिक सभ्यता के किसी भी पक्ष को लेकर हम दावा नहीं कर सकते कि इसे पूर्ण रूप से समझ लिया गया है. साक्ष्य के आधार पर अधिकतम एक अनुमानित निष्कर्ष निकाला जा सकता है. ऋषि परंपरा को लेकर भी यह अवधारणा नहीं बनाई जा सकती कि यह केवल किसी विशेष व्यक्ति और उसके शिष्यों के समूह और उनकी कुल परंपरा का नाम मात्र है. वेद में कोई नाम मात्र संज्ञा नहीं है, उसका एक आध्यात्मिक दार्शनिक पक्ष है. यह बात ऋषि परंपरा के संदर्भ में भी लागू होती है. किसी विशेष ऋषि/मन्त्रदृष्टा का नाम किसी विशेष दार्शनिक विचार को प्रदर्शित करता है, जो उस मंत्र में भी निरुपित होता है. ऋग्वेद में अनेक मन्त्र दृष्टा का नाम आता है, किन्तु प्रस्तुत शोध पत्र में केवल वशिष्ठ परम्परा का विश्लेषण किया गया है और उसके आध्यात्मिक दार्शनिक पक्ष का निरूपण किया गया है.

विषय प्रवेश :-

वैदिक देवों के संदर्भ में मैक्समूलर ने कहा था कि देवता केवल प्रकृति कि विभिन्न शक्तियों के नाम नहीं हैं, बल्कि इनका गंभीर आध्यात्मिक अर्थ है.[1] यदि हम वैदिक ऋषियों और देवों के सम्बन्ध कि बात करें तो मैकडोनाल्ड का मत है कि देवों और उनके याचकों के बीच कोई प्रेम अथवा भय का सम्बन्ध दिखाई नहीं देता.[2] वस्तुतः यह सम्बन्ध अधीनस्थ और अधिपती का नहीं है अपितु यह सम्बन्ध सहयोगी का है, एक मित्रवत सम्बन्ध है.[3] किन्तु मेरे विचार से यह सम्बन्ध सहयोगी का भी नहीं है, बल्कि यह एक ही चेतना कि विभिन्न अवस्था और उसे प्राप्त करने के विभिन्न मार्ग को दर्शाता है. महर्षि अरविन्द ने देवों को परमब्रम्ह कि अभिव्यक्ति के रूप में व्याख्यायित किया है.[4] देवों कि जो परिभाषा महर्षि दयानन्द ने दी है उसके अनुसार देव ईश्वर कि विभिन्न शक्तियों के नाम हैं. ऋग्वेद में ऐसी ऋचाएं हैं जिसके अनुसार मनुष्य देवत्व को प्राप्त कर सकता है.[5] स्पष्ट है देवों के मित्र ऋषि साधारण मनुष्य नहीं हैं, मन्त्रदृष्टा स्वयं को देवों का अधीनस्थ नहीं मानता बल्कि उन्हें सहयोगी अथवा अभिष्ट लक्ष्य मानता है. प्रश्न है कि देवों कि भांति ऋषियों का स्वरूप जैसा हम समझते हैं वैसा ही है अथवा उसका कोई अन्य अर्थ है, वह मनुष्य हैं अथवा पार्थिवेतर सत्ता.

---

* अतिथि प्रवक्ता, महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय, आजमगढ़; शोधछात्र, इतिहास विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

** प्रोफेसर, इतिहास विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

[1] F. Max Muller, K. M.; India what it can teach us; LOXGMAKS, GREEN. AND CO.; London; 1882; pp 201

[2] The Sacred Books of The East Described and Examined; Hindu Series; Vol 1; The Vedas and Bramhanas; The Christian Literature Society of India; London and Madras; 1898; pp 121

[3] ऋग्वेद 4.20.3, 10.66.14,

[4] श्रीअरविन्द; वेद रहस्य; पूर्वार्द्ध; श्रीअरविन्द आश्रम; पॉण्डिचेरी; 2018; pp 29

[5] ऋग्वेद 1.58.6 – अग्निदेव को मनुष्यों में देवत्व कि प्राप्ति हेतु स्थापित किया गया है. आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 1; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; 2010; pp 84

उपनिषद का अध्ययन बताता है ऋषि केवल व्यक्ति नहीं एक विचार हैं. बृहदारण्यक उपनिषद कहता है[6] "यह दोनों कान ही गोतम और भरद्वाज हैं..... यह दोनों नेत्र विश्वामित्र और जमदग्नि हैं..... यह दोनों नासारंध्र ही वशिष्ठ और कश्यप हैं". इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद कहता है "अंगिरा ऋषि ने इस (मुख्य प्राण) के ही रूप में उद्गीथ की उपासना की थी अतः इस प्राण को अंगिरस मानते हैं क्योंकि यह संपूर्ण अंगों का रस है."[7] इसी प्रकार हिरण्यगर्भ प्राजापात्य नामक ऋषि ऋग्वेद के सूक्त 10.121 के दृष्टा ऋषि है[8] और श्वेताश्वेतर उपनिषद हिरण्यगर्भ को एक ऐसे स्थान के रूप में व्याख्यायित करता है जहाँ से परमब्रम्ह परीक्षक भाव से विद्या और अविद्या दोनों का शासन करता है।[9] अन्य कई स्थानों पर भी हिरण्यगर्भ शब्द का अर्थ चेतन की शुद्धतम अवस्था के रूप में देखने को मिलता है। हम यह भी देखते हैं कि कई सूक्त के दृष्टा ऋषि के रूप में देवताओं का नाम मिलता है. उदाहरण के लिए ऋग्वेद के प्रथम मंडल के सूक्त 165 में दृष्टा ऋषि के रूप में इंद्र एवं मरुद् गण का भी नाम आता है जो देवता भी हैं और ऋषि भी.[10] मंडल 4 में सूक्त 18 एवं 26,[11] मंडल 8 के सूक्त 100 के चतुर्थ और पंचम श्लोक का दृष्टा ऋषि इंद्र हैं.[12] साथ ही ऋषियों और देवों के संयुक्त नाम भी हमें दृष्टा कवि के रूप में मिलते हैं उदाहरणार्थ प्रजापति वैश्वामित्र, अगस्त्य मैत्रावरुणि आदि.

हम जानते हैं की वैदिक देवताओं के स्वरूप का निर्धारण भी एक ऐसा विषय रहा है जो संदेह तथा अनुमान के पार नहीं है, किन्तु यदि हम शोधपत्र के दृष्टिकोण को लेकर आगे बढ़े और इसके आध्यात्मिक स्वरूप को ध्यान में रखकर अपनी परिकल्पना बनाए तो यह स्पष्ट है कि जिन ऋचाओं के दृष्टा देव हैं, उनका अर्थ यह निकाला जाएगा कि यह सभी सूक्त ब्रम्हज्ञान कि अवस्था में उसकी अभिव्यक्ति के अलग अलग स्वरूप का दर्शन है. इसे विस्तार से समझने के लिए उपरोक्त परिकल्पना को एक ठोस आधार देना आवश्यक है. इसलिए दैवत्व और ऋचाओं के सम्बन्ध को समझने के लिए दो चरण हो सकते हैं, प्रथम हम देवों के आध्यात्मिक अर्थ को स्थित करके ऋचाओं का अर्थ स्पष्ट करें जो विधि महर्षि अरविन्द की है, दूसरा हम ऋचा का अर्थ समझकर उससे ऋषि के आध्यात्मिक अर्थ को समझने का प्रयास करें. इस शोधपत्र में ऋषि वशिष्ठ को अध्ययन का केंद्र बनाया गया है.

वशिष्ठ परंपरा और प्राण विद्या

ऋषि वशिष्ठ को उपनिषद प्राणविद्या से जोड़ते हैं. बृहदारण्यक उपनिषद में कथा है कि प्राण तथा श्रोत, वाक् आदि इन्द्रियों में यह विवाद हुआ की उनमें कौन वशिष्ठ है अर्थात सर्वश्रेष्ठ है.[13] अंतिम रूप से यह निर्णय हुआ कि प्राण ही वशिष्ठ है. अतः इस आधार पर विचार करें तो वशिष्ठ कुल को प्राण विद्या से जोड़कर समझने का प्रयास करना चाहिए. इसकी पुष्टि के लिए हम 'योगवाशिष्ठ' के विषय को परिकल्पना के समर्थन में प्रयोग कर सकते हैं.

यद्यपि योगवाशिष्ठ का रचना काल अत्यंत बाद का है.[14] यदि हम इसके प्राचीनतम अनुमानित काल को स्वीकार करें एवं वेद के काल को 1500 सा० सं० पू० स्वीकार करें[15] तो भी दोनों ग्रंथों में कम से कम दो सहस्राब्दी

---

[6] बृहदारण्यक उपनिषद 2.2.4

[7] छान्दोग्य उपनिषद 1.2.10

[8] यह ऋषि यजुर्वेद के भी कई मन्त्रों के दृष्टा है. आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 4; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; परिशिष्ठ भाग 1 पृ० सं० 30

[9] श्वेताश्वेतर उपनिषद 5.1; ईशादि नौ उपनिषद् शांकरभाष्यार्थ; गीता प्रेस; गोरखपुर; pp 1290

[10] आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 1; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; 2010; pp 255

[11] आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 2; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; 2010; परिशिष्ट - 1; pp 2

[12] आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 3; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; 2005; परिशिष्ट – 1; pp 1

[13] बृहदारण्यक उपनिषद, अध्याय 6, ब्राम्हण 1

[14] "बी.एल. आत्रेय 'योगवासिष्ठ रामायण' को 6ठ्ठी या 7वीं सदी की रचना मानते हैं। यानी कालिदास के बाद की और गौडपाद व भतृहरि के पहले की रचना मानते हैं। उनका ऐसा मानने का आधार शायद यह हो सकता है कि भतृहरि के वाक्यपदीय और 'योगवासिष्ठ रामायण' के कुछेक श्लोक परस्पर मिलते हैं। डॉ. सुरेन्द्रनाथ दासगुप्ता इसे 7वीं 8वीं सदी की रचना मानते हैं। श्री पी.सी. दीवानजी इस ग्रन्थ को 10वीं सदी का स्वीकारते हैं। प्रो. शिवप्रसाद भट्टाचार्य 10वीं या 12वीं सदी के बीच की

का अंतर है. किन्तु हम जानते हैं कि पूर्व मध्यकाल तक वैदिक ऋषि परंपरा चलन में थी. यह बात हमें इस काल के भूमि अनुदान से जुड़े अभिलेखीय साक्ष्यों में देखने को मिलती है. दान प्राप्त करने वाले ब्राह्मण की ऋषि परंपरा का उल्लेख प्राप्त होता है. यह दान प्राप्तकर्ता स्वयं को किसी वैदिक ऋषि से जोड़ते हैं अतः पूर्व मध्यकाल के ब्राम्हणों की परंपरा भी सीधे वैदिक परंपरा से जुड़ती है.[16] इतिहासकारों का मत है कि इस काल तक लोकधर्म[17] अर्थात आम जनमानस कि धार्मिक मान्यताओं और वैदिक धर्म परम्परा में बहुत अंतर आ चुका था तथा ब्राह्मणों द्वारा स्वयं को वैदिक ऋषि परंपरा से जोड़ना स्वयं के ऐतिहासिक महत्व को स्थापित करने का प्रयास था. किंतु जब हम इस काल के दार्शनिक चिंतन पर विचार करते हैं तो यह अनुमान अनुचित प्रतीत होता है. यह सत्य है कि पूर्व मध्यकाल में लोगों कि आस्था यज्ञ के साथ मंदिरों में भी अभिव्यक्त होने लगी थी, किन्तु यह नहीं माना जा सकता कि ब्राम्हणों के शास्त्रार्थ से वैदिक ज्ञान परंपरा लुप्त हो गई थी. वस्तुतः भगवान शंकराचार्य, भगवान रामानुजाचार्य आदि ने अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन वैदिक ज्ञान परंपरा के आधार पर ही किया था. अतः यह सम्भव है कि ऋषि वशिष्ठ कि ज्ञान परंपरा भी इस काल तक संरक्षित रही हो, जो योगवाशिष्ठ के रूप में पुनर्व्यक्त हुई. जब हम उपनिषदों का अध्ययन करने के लिए सातवीं शताब्दी के बाद के दार्शनिक विमर्श जैसे अद्वैतवाद, विशिष्ट अद्वैतवाद आदि को आधार बना सकते हैं, तो ऋग्वेद कि ऋषि परंपरा को भी इस काल के ग्रन्थ के आधार पर समझने का प्रयास किया जा सकता है. यह सत्य है और निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जाता है कि वैदिक ज्ञान परंपरा के कर्मकांडीय पक्ष को वर्तमान समय में भी उसके मूल स्वरूप में संरक्षित रखने के प्रयास हो रहे हैं इसलिए यह पूर्णतः सम्भव है की ऋषि वशिष्ठ से जुड़े आध्यात्मिक विचार को कम से कम पूर्व मध्यकाल तक तो अक्षुण्ण रखा गया होगा जो अंततः योगवाशिष्ठ में संकलित किया गया होगा. योगवाशिष्ठ उपनिषद के ज्ञान से जुड़े अद्वितीय ग्रंथों में एक है.[18] योगवाशिष्ठ भगवान श्रीराम और उनके गुरू ऋषि वशिष्ठ के संवाद के रूप में अपने मंतव्य को व्यक्त करता है जिसके अनुसार संसार से पार उतरने के केवल दो मार्ग हैं. प्रथम आत्मज्ञान और द्वितीय प्राण निरोध. साधारण शब्दों में प्रथम ज्ञान मार्ग और द्वितीय योग मार्ग है.[19]

योगवाशिष्ठ का यह स्वरूप, विशेष रूप से द्वितीय पक्ष अर्थात प्राण विद्या से ग्रन्थ का सम्बन्ध, उपनिषद के इसी विचार को अभिव्यक्त करता है कि प्राण ही वशिष्ठ है. अतः यह सम्भव है कि ऋषि वशिष्ठ कि परंपरा का प्रथम सिद्धांत प्राण को साधने से जुड़ा रहा होगा अर्थात् वशिष्ठ परंपरा को मानने वाले ब्रम्हज्ञान हेतु योग तथा प्राण को साधने की क्रिया को सर्वोत्तम मार्ग मानते थे.

वशिष्ठ परंपरा और आत्मज्ञान

ऋषि वशिष्ठ ऋग्वेद के सप्तम् मंडल के दृष्टा ऋषि हैं. सप्तम् मंडल की उन ऋचाओं, जिनका दर्शन ऋषि वशिष्ठ परम्परा द्वारा किया गया है, उनके अध्ययन में हमें ज्ञानमार्गी परंपरा का तत्व मिलना चाहिए. हम सप्तम्

रचना मानते हैं। डॉ. राघवन इस कृति का रचनाकाल सन् 1100 ई. से लेकर सन् 1300 ई. तय करते हैं। श्री टी. जी. मेन्कर मानते हैं कि 'योगवासिष्ठ रामायण' के रचयिता मम्मट के काव्यप्रकाश से परिचित है, अतः वे इस कृति को 12वीं सदी की घोषित करते हैं। डॉ. जे.एन. फरक्युहर इस कृति को 13वीं या 14वीं सदी के बीच की मानते हैं।" प्रा. नयनाबहन सी. पटेल; ज्ञानमीमांसा, तत्वमीमांसा एवं मूल्यमीमांसा के संदर्भमें योगवासिष्ठ रामायण का अभ्यास; शोध प्रबंध; संस्कृत विभाग एवं अनुस्नातक केन्द्र एम.बी.आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, गोंडल; सौराष्ट्र विश्वविद्यालय; 2015; pp 105

[15] यद्यपि यह सर्वमान्य स्वीकृत काल नहीं है.

[16] सिंह, उपिन्दर; प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास; अनु० हितेंद्र अनुपम; Pearson; 2022; pp 620

[17] यहाँ धर्म का अर्थ पूजा पद्धति से लिया गया है.

[18] प्रा. नयनाबहन सी. पटेल; op. cit. pp 97-98

[19] आचार्य श्रीराम शर्मा; योगवाशिष्ठ भाग 1; संस्कृत संस्थान; बरेली; 1977; pp 15

मंडल के प्रथम सूक्त को अपने अन्वेषण का विषय बनाएंगे.[20] सप्तम् मंडल का प्रथम सूक्त की प्रथम ऋचा कहती है.
अ॒ग्निं नरो॒ दीधि॑तिभिर॒रण्यो॒र्हस्त॑च्युती जनयन्त प्रश॒स्तम्। दू॒रे॒दृ॒शं गृ॒हप॑तिमथ॒र्युम् ॥१॥
अ॒ग्निम् । नरः॑ । दीधि॑तिऽभिः । अ॒रण्योः॑ । हस्त॑ऽच्युती । ज॒न॒य॒न्त॒ । प्र॒ऽश॒स्तम् । दू॒रे॒ऽदृ॒श॑म् । गृ॒हऽप॑तिम् । अ॒थ॒र्युम् ॥
हिंदी रूपनांतरण[21] :- प्रशंसनीय, गतिमान्, दूर से परिलक्षित होने वाले गृहपति अग्नि को नर श्रेष्ठों ने हाथों और अँगुलियों की कुशलता से प्राप्त किया ॥१॥
व्याख्या :- इस व्याख्या में एक शब्द पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है. अ॒रण्योः॑ जिसका अर्थ 'दो अरणीयों में' होता है.[22] यज्ञ के लिए अग्नि प्रज्वलित करने हेतु अरणी का प्रयोग होता था. यहाँ ऋषि अरणी और अग्नि का संदर्भ, यज्ञ की प्रक्रिया के लिए भी दे रहा है.

हम जानते हैं कि यज्ञ कर्मकाण्डीय पक्ष के साथ आध्यात्मिक पक्ष को भी लेकर चलते हैं. महर्षि अरविन्द ने कर्मकाण्ड को आध्यात्मिक ज्ञान की आधारशिला मानते हुए उसे मूल ज्ञानमार्ग की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति माना है.[23] यज्ञ की व्याख्या उन्होंने निष्काम कर्म के रूप में की है[24] तथा श्रीमद्भगवद्गीता भी इस विचार की पुष्टि करती है.[25] स्वयं अग्नि को दिव्य संकल्प माना जाता है[26] क्योंकि इस दिव्य संकल्प से ही निष्काम कर्म का यज्ञ सृजित होता है और कर्म भस्म होते हैं. ऐसी अग्नि को उत्पन्न करने वाली अरणि भी किसी आध्यात्मिक अर्थ को अपने भीतर समेटे होगी. अरणि कि यह आध्यात्मिक अभिव्यक्ति क्या है?

अरणि की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में उपनिषद में एक श्लोक है. श्वेताश्वेतर उपनिषद कहता है अपने देह को अरणि और प्रणव को उत्तरारणि करके ध्यान रूप मंथन के अभ्यास से स्वप्रकाश परमात्मा को छिपे हुए अग्नि के समान देखो.[27] इस प्रकार सप्तम् मंडल की प्रस्तुत ऋचा में अरणियों का अर्थ देह और प्रणव के रूप में भी लिया जा सकता है. वस्तुतः यह अर्थ वशिष्ठ परंपरा के सन्दर्भ में की गई हमारी प्रथम व्याख्या के भी अनुरूप है जिसमें वशिष्ठ परंपरा को प्राणविद्या से जोड़ा गया था. इस प्रकार से देखने पर श्लोक जो अर्थ व्यक्त कर रहा है उसे हम इस प्रकार लिख सकते हैं.

प्रशंसनीय, गतिमान् , दूर से परिलक्षित होने वाले गृहपति अर्थात इस शरीर की स्वामी अग्नि अथवा दिव्य संकल्प को श्रेष्ठ नर अपने हाथों से अर्थात स्वयं के प्रयास से प्रणव साधन द्वारा देह को माध्यम बनाकर प्राप्त करते हैं.

---

[20] व्याख्या के लिए क्रमशः निम्नवत ऋग्वेद भाष्य प्रयोग हुए हैं.

1. सरस्वती, महर्षि दयानंद; ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका; आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट; दिल्ली; 2010
2. पं. हरिशरण सिध्दान्तालंकार; ऋग्वेदभाष्यम्; श्री घुडामल प्रहलाद कुमार आर्य धर्मर्थ ट्रस्ट; दिल्ली; 2013
3. पं० शर्मा, जयदेव; ऋग्वेद भाषा भाष्य; आर्य साहित्य मंडल; अजमेर; 2000
4. आचार्य श्रीराम शर्मा; ऋग्वेद संहिता भाग 3; युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट; मथुरा; 2005;

[21] प्रस्तुत सूक्त की सभी ऋचाओं का हिंदी रूपनांतरण आचार्य श्रीराम शर्मा जी के भाष्य से लिया गया है. अन्य ऋचाओं के हिंदी रूपनांतरण का मुख्य आधार भी आचार्य श्रीराम शर्मा के भाष्य को ही बनाया गया है किन्तु ऋचा के अर्थ की व्याख्या में अन्य भाष्य कारों द्वारा प्रयुक्त व्याख्याओं का भी प्रयोग आवश्यकता अनुसार किया जाएगा.

[22] पं. हरिशरण सिध्दान्तालंकार जी की व्याख्या से.

[23] श्रीअरविन्द; वेद रहस्य; उत्तरार्ध; श्रीअरविन्द आश्रम; पॉण्डिचेरी; 2015; pp 395

[24] श्रीअरविन्द; गीता प्रबंध; श्री अरविन्द आश्रम; 2017; pp 123-26

[25] ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥4.19॥ श्रीमद्भगवद्गीता
जिसके समस्त कार्य कामना और संकल्प से रहित हैं, ऐसे उस ज्ञानरूप अग्नि के द्वारा भस्म हुये कर्मों वाले पुरुष को ज्ञानीजन पण्डित कहते हैं।।

[26] श्रीअरविन्द; वेद रहस्य; पूर्वार्द्ध; op.cit.; pp 31

[27] स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम्। ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्देवं पश्यन्निगूढवत्॥
श्वेताश्वेतर उपनिषद; ईशादि नौ उपनिषद् शांकरभाष्यार्थ; गीता प्रेस; गोरखपुर; pp 1212

यह उपरोक्त व्याख्या वशिष्ठ परंपरा के प्रथम विचार को व्यक्त करती है जो ब्रम्ह ज्ञान के साधन की व्याख्या कर रही है. ऐसा नहीं है की यह सम्पूर्ण सूक्त केवल आध्यात्मिक उपलब्धि को परिलक्षित करता है. यथा सूक्त का दृष्टा ऋषि अग्नि से कामना करता है की वह यज्ञकर्ता को संतान और धन प्रदान करे.[28] यज्ञकर्ता का अनुरोध है की अग्नि देव उसकी पापों से रक्षा करें[29], आसुरीय माया से रक्षा करें.[30] इसलिए अग्नि अथवा दिव्य संकल्प केवल ब्रम्हज्ञान का साधन नहीं है. यह लौकिक उपलब्धि का साधन भी है तथा माया के विरुद्ध कवच भी. हमें अग्नि की पूर्णता को समझकर सूक्त के मूल विचार को और विस्तार से समझना होगा जिससे हम वशिष्ठ परंपरा को भली प्रकार समझ सकें.

कठोपनिषद् में यम द्वारा नचिकेता को अग्नि का ज्ञान दिया जाता है. अग्नि की विद्या को समझाकर अंततः यम कहते हैं अब से यह अग्नि तेरे नाम से जानी जाएगी.[31] इसके बाद वह कहते हैं "त्रिविध नचिकेता, त्रिविध कर्मों से युक्त होकर, जन्म-मरण से पार हो जाता है तथा ब्रह्म से उत्पन्न आराध्य, तेजस्वी, सर्वज्ञ अग्नि को जानकर तथा उसका साक्षात्कार करके पूर्ण शांति को प्राप्त होता है।"[32] क्योंकि इसके पूर्व श्लोक में अग्नि का एक नाम नचिकेता बताया गया है इसलिए श्लोक में आए त्रिणाचिकेत शब्द का अर्थ तीन प्रकार की अग्नि भी हो सकता है. तीन प्रकार की अग्नि को जानकर त्रिविध कर्म से युक्त हो मनुष्य जन्म और मृत्यु को पार कर सकता है. किन्ही व्याख्याकारों द्वारा तीन प्रकार के कर्म यज्ञ, दान और तप के रूप में बताए जाते हैं. सम्भव है की यहाँ तीन प्रकार के कर्म का तात्पर्य तीन ऋण (देव, ऋषि और पितृ) को उतारने से हो.

कर्म कोई भी हो यह सभी कर्म संकल्प से जन्म लेंगे और तीन प्रकार के कर्म के लिए तीन प्रकार की अग्नि की आवश्यकता को कठोपनिषद् में स्वीकार किया गया है, प्रश्न है की यह तीन प्रकार की अग्नि क्या है. सम्भव है यह देहिक, दैविक और आध्यात्मिक ताप को समाप्त करने की संकल्पशक्ति हो, सम्भव है यह त्रिगुण माया से उत्पन्न संकल्प हो. वस्तुतः यह त्रिगुण माया से उत्पन्न संकल्प ही है,[33] किन्तु उसका स्वरूप साधारण संकल्प के समान नहीं है. त्रिगुण माया से उपजा साधारण संकल्प उन गुणों के अधीन होगा जैसे क्रोध से उत्पन्न संकल्प तमोगुणी है, ऐश्वर्यशाली कर्म का संकल्प रजोगुणी है और करुणा से उपजा संकल्प सतोगुणी है. किन्तु ब्रम्ह को जान लेने पर यह सभी संकल्प अपने क्रियात्मक पक्ष में त्रिगुणजनित दिखने पर भी दिव्य होते हैं. आत्मज्ञान संपन्न मनुष्य किसी गुण से घृणा नहीं करता, भगवान शंकराचार्य ने इसकी सरल व्याख्या करते हुए कहा है कि घृणा अपने से भिन्न किसी दूषित पदार्थ को देखने वाले पुरुष को ही होती है.[34] जो ब्रम्हबोध संपन्न आत्मज्ञानी है वह सभी में आत्मस्वरूप देखता है, वह किसी गुण का त्याग नहीं करता, मोह, क्रोध, करुणा, ऐश्वर्य जैसे गुणों को प्रेक्षक भाव से देखता है और अभिनय करता है. वह कर्म करता है किन्तु उद्वेग रहित होकर,[35] वह कर्म क्रोध का हो, मोह का हो, करुणा का हो अथवा ऐश्वर्यशाली हो. यह बात योगवाशिष्ठ के नायक श्रीराम के चरित्र से स्पष्ट होती है. श्रीराम का समुद्र पर क्रोध तमोगुण नहीं है, भले क्रोध तमोगुण की पहचान है, क्योंकि वह लीला है. अपनी भार्या सीता के वियोग पर मोहग्रस्त दिखना भी उन पूर्ण मानव की लीला है. संसार में पूर्ण लिप्त दिखने पर भी योगवाशिष्ठ के नायक मुक्त हैं.

---

[28] 7.1.11-12

[29] 7.1.15

[30] 7.1.10

[31] कठोपनिषद् 1.1.16

[32] त्रिणाचिकेतस्त्रिभिरेत्य संधिं त्रिकर्मकृतरति जन्ममृत्युः।
ब्रह्मज्जनं देवमिद्यं विदित्वा निकयेमाम् शांतिमत्यन्तमेति ॥ 17॥

[33] वास्तव में सभी प्राणी प्रकृति द्वारा उत्पन्न तीन गुणों के अनुसार कर्म करने के लिए विवश होते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता 3.5

[34] ईशादि नौ उपनिषद् शांकरभाष्यार्थ; गीता प्रेस; गोरखपुर; pp 38

[35] योगवाशिष्ठ की कथा के अनुसार भगवान श्रीहरि ने प्रह्लाद जी को आदेश दिया "साधो! अब उठो, शीघ्र उठो ओर इस विशाल दैत्य-राज्यलक्ष्मीका तथा अपने स्वरूपका स्मरण करो। अनघ । तुम तो जीवन्मुक्त हो, अतः राज्यशासन करते हुए ही उद्वेगरहित होकर अपने इस शरीरको कल्पान्तपर्यन्त कमेमिं प्रेरित करते रहो। " योगवाशिष्ठ; गीता प्रेस; गोरखपुर; 2संवत 2073; pp 264

यही योगवाशिष्ठ का मूल विषय है की सन्यास का अर्थ संसार का त्याग न होकर उसकी क्षणभंगुरता, परिवर्तनशीलता को स्वीकार करते हुए नित्य कर्मरत रहना. यह विचार ईशोपनिषद् में भली प्रकार व्याख्यायित है की जो केवल संसार में लिप्त हैं वह अंधकार को प्राप्त होते हैं और जो केवल विद्या के पीछे भागते हैं वह और अधिक अन्धकार को प्राप्त करते हैं.[36] अतः जो कोई ब्रह्म से उत्पन्न आराध्य, तेजस्वी, सर्वज्ञ अग्नि को जानकर तथा उसका साक्षात्कार करके, अग्नि के तीन रूप जानता है, तीन गुणों से उत्पन्न संकल्प को जानता है, जानकर कर्म करता है, वह जन्म और मृत्यु को पार करके शांति को प्राप्त होता है.

वशिष्ठ परम्परा इसी विचार को अभिव्यक्त कर रही है इसलिए उपरोक्त सूक्त की प्रथम ऋचा में प्राण को साध कर अग्नि को प्रज्वलित करने की बात की गई है. यह नचिकेता कि अग्नि ही है. जब यह दिव्य अग्नि जागृत हो गया, प्राण को साध कर मन को उद्वेदरहित कर लिया गया, तब वह अग्नि माया से रक्षण करने वाली कवच भी है और भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति का साधन भी. अग्नि दिव्य संकल्प है, किन्तु वह संकल्प संसार के भौतिक त्याग की प्रेरणा नहीं है, वह संकल्प है धनोपार्जन एवं सन्तानोत्पत्ति का संकल्प, संसार को भोगने का संकल्प किन्तु माया से सुरक्षित रहने का भी संकल्प.

निष्कर्ष :-

वैदिक ऋषि वशिष्ठ सम्भवतः केवल एक व्यक्ति नहीं एक आध्यात्मिक विचार का अभिव्यक्तीकरण है, इस अवधारणा को स्वीकार करने के लिए भारतीय धर्म शास्त्रों में ठोस कारण उपस्थित हैं. संभव है कि इस आध्यात्मिक विचार की उत्पत्ति किसी एक ऋषि द्वारा हुई हो जिनका नाम वशिष्ठ रहा हो. सम्भव है इस विचार के समर्थक ऋषियों के अपनी परम्परा को 'वशिष्ठ' अर्थात् 'श्रेष्ठ में श्रेष्ठतम्' नाम दिया हो. वशिष्ठ परम्परा के सिद्धांत के तीन पहलू हैं. प्रथम आत्मज्ञान ही संसार से मुक्ति का एकमात्र उपाय है, द्वितीय यह की संसार से विरक्ति का तात्पर्य संसार का भौतिक त्याग नहीं बल्कि उसमें सक्रिय भागीदारी है, यह भागीदारी पूर्ण हो, पूर्ण विरक्ति के साथ है.[37] इस स्थिति की प्राप्ति का माध्यम प्राण को साधना है जो इस यात्रा का आरम्भबिंदु और मार्ग का वाहन है, इसी से वशिष्ठ परम्परा का प्रथम श्लोक दो अरणियों से अग्नि को प्रज्वलित करने का उपदेश देता है. यह वशिष्ठ सिद्धांत का तृतीय पहलू है.

जिन वैदिक ऋषियों अथवा दृष्टा कवियों को हम साधारण मनुष्य समझते हैं वह वास्तव में किसी आध्यात्मिक विचार की अभिव्यक्ति हैं. वैदिक दर्शन पर पुस्तक लिखने वाले अंग्रेज विद्वान मैकडोनल का मानना था की वेदों के अध्ययन के लिए भारतीय दर्शन के अन्य ग्रंथों का आधार लेकर किया गया शोधकार्य सत्य के अधिक समीप पहुंच सकेगा.[38] यह आवश्यक है कि हम वैदिक देवताओं, यज्ञ के स्वरूप, ऋषियों आदि को लेकर अपने भावी शोधकार्यों में उपनिषदादि अन्य भारतीय ग्रंथों को आधार बनाएं. अंगिरा, विश्वामित्र, कश्यप, अत्रि, भारद्वाज भी अलग अलग आध्यात्मिक विचारों, ब्रह्म की अभिव्यक्ति के अलग-अलग मार्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं. प्रसिद्ध वचन 'एकम् सत् विप्रा बहुधा वदन्ति' के माध्यम से दृष्टा कवि इन्हीं अलग-अलग मार्गों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करना चाह रहा है.

◂◂ ▸▸

---

[36] अन्धं तमः प्रनिशन्ति येऽनिद्यामुपासते ।
ततो भूय इ् ते तमो य उ निद्याया रताः ॥ ९॥ ईशोपनिषद्

[37] गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में राम के स्वरूप का ऐसा ही विरोधाभासी स्वरूप दिखाया है.

[38] मैकडौनल, ए० ए०; वैदिक माइथौलोजी; अनु० रामकुमार राय; चौखम्बा विद्याभवन; वाराणसी; 2014; pp 8

भारत में तिब्बती सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखना : भारतीय संस्कृति के साथ समायोजन में चुनौतियाँ

स्नेहलता*
डॉ. सीमा राणा**

सारांश (Abstract)

यह शोध-पत्र भारत में निवासरत तिब्बती समुदाय की सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण तथा भारतीय संस्कृति के साथ उनके समायोजन की जटिल प्रक्रिया का विस्तृत अकादमिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। 1959 के पश्चात भारत आए तिब्बती शरणार्थियों ने यहाँ सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा के साथ-साथ अपनी धार्मिक, भाषाई और सांस्कृतिक परंपराओं को बनाए रखने का निरंतर प्रयास किया है। वैश्वीकरण[1], शहरीकरण[2], पीढ़ीगत परिवर्तन[3], आर्थिक दबाव और राजनीतिक अनिश्चितता के कारण तिब्बती सांस्कृतिक पहचान अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है। इस अध्ययन में सांस्कृतिक संरक्षण बनाम सामाजिक एकीकरण के द्वंद्व, भाषाई संकट, महिलाओं की भूमिका, शिक्षा का प्रभाव और नई पीढ़ी के दृष्टिकोण का गहन विश्लेषण किया गया है। शोध-पत्र का निष्कर्ष यह स्पष्ट करता है कि भारतीय बहुलतावादी समाज में रहते हुए तिब्बती समुदाय अपनी विशिष्ट पहचान को बनाए रख सकता है, बशर्ते सांस्कृतिक संरक्षण और समायोजन के बीच संतुलित नीति अपनाई जाए।

1. भूमिका

1959 में तिब्बत से दलाई लामा के भारत आगमन के पश्चात भारत तिब्बती शरणार्थियों का प्रमुख आश्रय स्थल बना।[4] भारत की उदार और मानवीय शरणार्थी नीति के अंतर्गत हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, कर्नाटक, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम तथा अन्य क्षेत्रों में तिब्बती बस्तियों की स्थापना हुई। समय के साथ तिब्बती समुदाय ने शिक्षा, धार्मिक संस्थानों, हस्तशिल्प, कृषि, व्यापार तथा पर्यटन से जुड़ी गतिविधियों के माध्यम से अपनी सामाजिक-आर्थिक उपस्थिति को सुदृढ़ किया। इसके साथ-साथ सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण का प्रश्न भी अत्यंत महत्वपूर्ण बना रहा।

प्रवासन की स्थिति में किसी भी समुदाय के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि वह अपनी मूल सांस्कृतिक पहचान को किस प्रकार सुरक्षित रखे और साथ ही मेज़बान समाज के साथ सामंजस्य भी स्थापित करे। तिब्बती समुदाय के लिए यह चुनौती और भी जटिल है क्योंकि उनकी पहचान केवल भौगोलिक नहीं बल्कि ऐतिहासिक, धार्मिक और राजनीतिक संघर्ष से भी जुड़ी हुई है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य भारत में तिब्बती सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण तथा भारतीय संस्कृति के साथ समायोजन की प्रक्रिया में उत्पन्न चुनौतियों का समग्र विश्लेषण करना है।

भारत में तिब्बती बस्तियों का भौगोलिक विस्तार विभिन्न राज्यों में अलग-अलग परिस्थितियों और सामाजिक समर्थन के आधार पर हुआ। उदाहरण के लिए, धर्मशाल, दिल्ली और सिक्किम में शरणार्थियों के लिए विभिन्न प्रशिक्षण केंद्र और शैक्षणिक संस्थान स्थापित किए गए, जिससे तिब्बती संस्कृति के संरक्षण में सहूलियत मिली। इन केंद्रों ने शिक्षा, भाषा और सांस्कृतिक अनुष्ठानों के माध्यम से समुदाय के भीतर

* अनुसंधानकर्ता, पश्चिमी इतिहास विभाग, शिया पी.जी. कॉलेज, लखनऊ
** मार्गदर्शक (सहायक प्रोफेसर), पश्चिमी इतिहास विभाग, शिया पी.जी. कॉलेज, लखनऊ

सामाजिक सामंजस्य बनाए रखने में योगदान दिया। इसके अतिरिक्त, स्थानीय भारतीय समुदायों के साथ संपर्क और सामाजिक सहयोग ने तिब्बती समाज को भारतीय समाज के अनुकूल ढालने में मदद की।

2. तिब्बती सांस्कृतिक पहचान की अवधारणा एवं विशेषताएँ

तिब्बती सांस्कृतिक पहचान का आधार बौद्ध धर्म, तिब्बती भाषा, मठ व्यवस्था, पारंपरिक जीवन शैली तथा सामूहिक सामाजिक चेतना है।[5] तिब्बती समाज में धर्म केवल आध्यात्मिक आस्था नहीं बल्कि सामाजिक संगठन और नैतिक अनुशासन का माध्यम रहा है। मठों ने शिक्षा, संस्कृति और सामाजिक नियंत्रण के केंद्र के रूप में कार्य किया है।

भारत में निर्वासन के पश्चात तिब्बती समुदाय ने अपनी पहचान को संरक्षित रखने के लिए केंद्रीय तिब्बती प्रशासन, तिब्बती विद्यालयों, मठों और सांस्कृतिक संस्थानों की स्थापना की। तिब्बती भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाए रखना, पारंपरिक वेशभूषा, भोजन, संगीत, नृत्य और त्योहारों का संरक्षण इस सांस्कृतिक निरंतरता का प्रतीक है। इसके बावजूद, समय और परिस्थितियों के प्रभाव से सांस्कृतिक स्वरूप में परिवर्तन आना स्वाभाविक है।

सांस्कृतिक संरक्षण में विविध पहलुओं का समावेश होता है जैसे: - पारंपरिक नृत्य और संगीत का संवर्धन - तिब्बती हस्तशिल्प, वस्त्र और भोजन की शैली का संरक्षण - धार्मिक अनुष्ठानों, त्योहारों और विशेष अवसरों की अनवरत परंपरा - पीढ़ीगत सांस्कृतिक शिक्षा और भाषा प्रशिक्षण - तिब्बती धार्मिक ग्रंथों और साहित्य का अध्ययन - सामुदायिक संगठन और सामाजिक परंपरा इन सभी गतिविधियों के माध्यम से तिब्बती समाज ने अपने सांस्कृतिक तत्वों को जीवंत बनाए रखा है, जो भारतीय बहुलतावादी समाज में एक विशिष्ट पहचान सुनिश्चित करता है।

3. भारतीय संस्कृति के साथ तिब्बती समुदाय का समायोजन

भारतीय संस्कृति की बहुलतावादी प्रकृति ने तिब्बती समुदाय को अपनी पहचान बनाए रखने की पर्याप्त स्वतंत्रता प्रदान की है।[6] शिक्षा, रोजगार और सामाजिक संपर्कों के माध्यम से तिब्बती समाज भारतीय समाज के साथ जुड़ा। हिंदी और अंग्रेज़ी भाषा के ज्ञान ने तिब्बती युवाओं को मुख्यधारा से जोड़ने में सहायता की।

भारतीय त्योहारों, खान-पान और सामाजिक मूल्यों का प्रभाव तिब्बती जीवन शैली में दिखाई देता है। यह समायोजन पूर्ण आत्मसात न होकर चयनात्मक एकीकरण का रूप लेता है, जिसमें तिब्बती समुदाय अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता को बनाए रखते हुए भारतीय समाज में स्थान बनाता है।

समायोजन की प्रक्रिया में तिब्बती समुदाय ने भारतीय शिक्षा प्रणाली, व्यवसायिक अवसरों और सामाजिक नेटवर्क का लाभ उठाते हुए आधुनिक जीवन शैली को अपनाया है। इसके साथ ही, पारंपरिक मूल्य, धार्मिक अभ्यास और सांस्कृतिक समारोहों का निरंतर पालन यह सुनिश्चित करता है कि पहचान और परंपरा में संतुलन बना रहे।

सांस्कृतिक समायोजन के अतिरिक्त, तिब्बती समुदाय ने स्थानीय भारतीय समाज के साथ सहयोग और पारस्परिक आदान-प्रदान के माध्यम से सामाजिक समरसता बनाए रखी है। व्यापार, पर्यटन और शैक्षणिक संस्थानों में उनकी सक्रिय भागीदारी ने भारतीय समाज में उनके योगदान को स्पष्ट किया है। यह समायोजन केवल सामाजिक नहीं बल्कि आर्थिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में भी दिखाई देता है।

4. सांस्कृतिक संरक्षण की प्रक्रिया में चुनौतियाँ

भारत में तिब्बती सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं।[7] सबसे प्रमुख चुनौती भाषाई है, क्योंकि नई पीढ़ी में तिब्बती भाषा का प्रयोग सीमित होता जा रहा है। आर्थिक दबावों के कारण पारंपरिक व्यवसायों से दूरी और आधुनिक जीवन शैली की ओर झुकाव बढ़ रहा है।

इसके अतिरिक्त वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और मीडिया के प्रभाव से सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन हो रहा है। दीर्घकालिक निर्वासन और राजनीतिक अनिश्चितता भी सांस्कृतिक आत्मविश्वास को प्रभावित करती है। शिक्षा, तकनीकी विकास और सामाजिक बदलावों ने तिब्बती जीवन शैली में परिवर्तन को तेज किया है, जिससे सांस्कृतिक संरक्षण के लिए नई रणनीतियों की आवश्यकता उत्पन्न हुई है।

सांस्कृतिक संरक्षण में नीतिगत और सामाजिक पहलुओं को शामिल करना आवश्यक है। स्थानीय भारतीय सरकार, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन और विभिन्न NGOs के सहयोग से तिब्बती भाषा, धर्म, कला और साहित्य को संरक्षित करने के लिए कार्यक्रमों का आयोजन किया जा सकता है। यह केवल परंपराओं को बचाने के लिए नहीं बल्कि नई पीढ़ी में सांस्कृतिक जागरूकता पैदा करने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

5. पीढ़ीगत परिवर्तन, लैंगिक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक भूमिका

पीढ़ीगत अंतर तिब्बती सांस्कृतिक पहचान को नए संदर्भ प्रदान करता है। पहली पीढ़ी निर्वासन को अस्थायी मानते हुए सांस्कृतिक संरक्षण पर केंद्रित रही, जबकि नई पीढ़ी भारत को स्थायी निवास मानकर अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाती है।

तिब्बती महिलाओं की भूमिका सांस्कृतिक संरक्षण में विशेष रूप से महत्वपूर्ण रही है।[8] वे भाषा, परंपरा और धार्मिक मूल्यों की संवाहक रही हैं। शिक्षा और रोजगार के अवसरों ने महिलाओं की सामाजिक स्थिति को सशक्त किया है, किंतु इससे पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों के बीच संतुलन की चुनौती भी उत्पन्न हुई है।

युवाओं और महिलाओं की भागीदारी ने सांस्कृतिक उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों, भाषा प्रशिक्षण और सामाजिक कार्यक्रमों में नवजीवन प्रदान किया है। यह केवल संरक्षण का कार्य नहीं बल्कि समुदाय के भीतर नेतृत्व, सामाजिक जिम्मेदारी और सहयोग की भावना विकसित करने में भी सहायक है।

शहरीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव ने तिब्बती युवाओं के व्यवहार, पोशाक, खान-पान और मनोरंजन की प्राथमिकताओं में परिवर्तन किया है। इस परिवर्तन को स्वीकार करते हुए परंपरागत मूल्यों के साथ संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए विशेष सांस्कृतिक शिक्षा, कार्यशालाएँ, साहित्यिक कार्यक्रम और सामुदायिक आयोजन नई पीढ़ी में सांस्कृतिक चेतना बनाए रखने में मदद कर सकते हैं।

6. निष्कर्ष (Conclusion)

भारत में तिब्बती सांस्कृतिक पहचान का संरक्षण एक सतत और गतिशील प्रक्रिया है। भारतीय संस्कृति के साथ समायोजन ने तिब्बती समुदाय को सुरक्षा और अवसर प्रदान किए हैं, परंतु इसके साथ सांस्कृतिक क्षरण का खतरा भी जुड़ा है। भाषा, शिक्षा और सांस्कृतिक संस्थानों को सुदृढ़ करना अत्यंत आवश्यक है।

नई पीढ़ी में सांस्कृतिक जागरूकता, महिलाओं की सक्रिय भूमिका, और स्थानीय भारतीय समाज के सहयोग से तिब्बती समुदाय अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रख सकता है। वैश्वीकरण और तकनीकी बदलावों के प्रभाव के बावजूद, संतुलित नीतियों और सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से तिब्बती संस्कृति और परंपराओं का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सकता है। यह निष्कर्ष यह दर्शाता है कि सांस्कृतिक संरक्षण और समायोजन के बीच संतुलन बनाए रखना तिब्बती समुदाय की दीर्घकालीन स्थिरता और पहचान के लिए महत्वपूर्ण है।

फुटनोट सूची

1. वैश्वीकरण: Globalization का तिब्बती संस्कृति पर प्रभाव।
2. शहरीकरण: Urbanization के कारण सांस्कृतिक परिवर्तन।
3. पीढ़ीगत परिवर्तन: New generation की दृष्टिकोण और व्यवहार।
4. दलाई लामा, *My Land and My People*, McGraw Hill, New York.
5. Melvyn C. Goldstein, *The Snow Lion and the Dragon*, University of California Press.

6. Tsering Shakya, *The Dragon in the Land of Snows*, Penguin Books.
7. Amartya Sen, *Identity and Violence*, Penguin.
8. UNHCR, *Report on Tibetan Refugees in India*.

संदर्भ सूची (References)

- दलाई लामा. *निर्वासन में तिब्बती संस्कृति और पहचान*.
- गोल्डस्टीन, मेल्विन सी. *तिब्बती समाज और संस्कृति*.
- शाक्य, त्सेरिंग. *तिब्बत का आधुनिक इतिहास*.
- सेन, अमर्त्य. *पहचान और सांस्कृतिक संघर्ष*.
- भारत सरकार. *तिब्बती शरणार्थी नीति से संबंधित दस्तावेज़*.
- UNHCR. *Tibetan Refugees in South Asia*.
- Central Tibetan Administration. *Annual Cultural Reports*.

अकेली–प्रेम और सामाजिकता की निर्णायक कहानी

उमापति यादव*
डॉ. गीता पंत**

मन्नू भण्डारी की रचित कहानी में सोमा, बुआ, बुढ़िया है परित्यक्ता है और अकेली भी।

सोमा बुआ की जवानी उसी समय चली गयी जब उनका बेटा इस संसार में नहीं रहा। बुआ का पूरा जीवन नीरश व उदासी में व्यीतत होने लगा। अगर बेटा जीवित रहता तो भी अपना पूरा जीवन उसी के सहारे काट लेती। यही स्थिति बुआ के पति सन्यासी जी की है। पुत्र वियोग का सदमा ऐसा लगा कि गृह त्यागकर सन्यासी जैसा जीवन व्यतीत करने लगे।

बुआ का आबाध गति से चलता हुआ जीवन एक महीने के लिए ठप हो जाता है। जब सन्यासी जी घर आते है। भारतीय समाज में पति–पत्नी का शाश्वत प्रेम दिखया गया है। कोई भी पत्नी अपने पति के वियोग को सहन नहीं कर सकती। लेकिन सोमा बुआ अपने पति के वियोग को खुशी से सहन ही नहीं करना चाह रही है बल्कि संयासी जी का एक महीने घर पर रहना पुलिस पहरेदारी के समान लगता है। ऐसी स्थिति में एक भारतीय नारी पति से सदैव दूर रहना चाहेगी। ''जब तक पति रहते उनका मन और भी मुरझाया हुआ रहता क्योंकि पति के स्नेह हीन व्यवहार का अंकुश उनके रोजमर्रा जीवन की आबाध गति से बहती स्वच्छंद धारा को कुण्ठित कर देता। उस उक्त उनका घुमना–फिरना, मिलना–जुलना बन्द हो जाता है और सन्यासी जी महाराज से तो यह भी नहीं होता कि दो मिठे बोल बोलकर सोमा बुआ को एक सम्बल ही पकड़ा दे, जिसका आसरा लेकर वह उनके वियोग की 11 महीने काट ले।[1]

बुजुर्गों का जीवन एक दूसरे के सहारे ही कट जाता है। एक पति एवं पत्नी दोनों एक दूसरे के साथ रह रहे हो तो, अपना सुख–दुख एक दूसरे से साझा करते है। लेकिन यहॉ सोमा–बुआ एक महीने किसी से नहीं मिलने के कारण उनका अंग अवयवों शिथिल पड़ जाने से उनकी जीभ अधिक सक्रिय हो उठती है।

''एक महीने में अंग अव्ययों के शिथिल हो जोने के कारण उनकी जीभ अधिक सक्रिय हो उठती है।[2]

अकेली औरत की स्वच्छंदता का आलम यह है कि वह जिस तिस पास–पड़ोस गली मुहल्ले के मुँह बोले रिश्ते में भी प्रेम की मरी जाती है और यह रिश्ता उनके पति को नहीं सुहाता।

एक किशोरी लाल बड़े पैसे वाले है और वे निमंत्रण भी अपने कटेगरी वालों को ही देते है। बुआ पड़ोस की रहने वाली है, इससे अछुती हैं फिर भी मुण्डन में वे जाती है खान–पान व रसोई का पूरा दायित्व बुआ के हाथों में है। अंत समय में जब गुलाब जामुन कम पड़ने की सम्भावना को बुआ समझ लेती है और तत्काल बाजार से मॅगवाकर व्यवस्था सम्भालने के साथ–साथ भद्द उड़ने से बचा लेती है। यह बात स्वयं किशोरी लाल भी स्वीकार करते है। किशोरीलाल को सोमा बुआ अपने घर के सदस्य के रूप में जानती है। इसलिए कहती है कि नई नवेली बहुओं से आज तक कुछ नहीं होने वाला है। उनके कार्यों पर बुआ इतनी हँसती है कि पेट फूल जाता है।

किसी के यहॉ बिना निमंत्रण के जाना बुआ के अपनत्व का प्रतीत है। आस पास के सभी लोगों को वे अपने पुत्र हरखू के समान मानती है। उनका निमंत्रण पक्ष, प्रेम पक्ष के आगे शून्य प्रतीत होता है। इसलिए वे चाहती है कि ''कोई प्रेम नहीं रखे तो दस बुलावे पर नही जाऊॅ और प्रेम रखे तो बिना बुलावे भी सिर के बल जाऊॅ।[3]

सोमा बुआ अपने देवर के ससुराल वालों से अपना सम्बन्ध प्रेम के द्वारा जिन्दा रखना चाहती है। समाज में रहने वाले मनुष्य भी इस बात को भली–भॉति जानता है कि हम प्रेम के कारण ही एक दूसरे से जुड़े हुए है। अगर यह न होता तो शायद इस धरती पर जीवन की सम्भावना नहीं होती। यही मनुष्य–मनुष्य

* शोध छात्र, कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड) मो : 8726911077
Email id - 77umapati@gmail.com
** शोध निर्देशिका, कुमाऊं विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

को पिता–पुत्र को भाई–बहन को जोड़े रखता है। अगर यह हमारे बीच पूरी तरह समाप्त हो जाये तो हम अपने माता–पिता, सगे सम्बन्धियों को समाप्त कर डालेगे। यह प्रेम बुआ के बीच एकाएक उत्पन्न हो जाता है और वे अपने मृत बेटे की एक मात्र निशानी अंगुठी को जब बेचने के लिए राधा को देती है तो उनका हाथ एक बार देने से हिचकता है। लेकिन यह हिचकना उनके प्रेम को नहीं रोक पाता है क्योंकि यही अंगुठी ही नये रिश्ते को जोड़ सकती है।

इसी संदर्भ में 'प्रेम की बात' से उद्धत जनेन्द्र का कथन देखना चाहिए– प्रेम में नियम नहीं होता। नियम आदमी बनाता है प्रेम पर उसका बस नहीं, वह ऐसी चीज है जैसे भूकम्प, वह आपसे नहीं आता। अदम अगोचर से आता है। या जाने कम्बख्त कहा से आता है।[4]

जिस किसी से स्वभाविक बोलचाल है उनके यहॉ बुआ बिना बुलाये चली जाती है लेकिन जब उन्हें सूचना मिलती है कि भगीरथ लाल के यहॉ निमंत्रण वाली लिस्ट में उनका भी नाम है तो वे नन्दा की बात पर पूरा भरोसा कर लेती है और वे लड़की वाले भी समधियाने के हैं, तो यों ही मुँह उठाये तो जा नहीं सकती। अपने जीवन की जमा पूँजी पर नजर डालती है। कुल जमा सात रुपये और थोड़ी सी रेजगारी निकलती है। इतने से तो कायदे की बिन्दी भी नहीं आनी थी। प्रेमचन्द द्वारा लिखित कहानी ईदगाह में जैसे अमीना अठन्नी को ईमान की तरह बचाये चली आ रही थी और गॉव के सभी बच्चे जब तैयार होकर मेले में जा रहे हैं तो उनका वह प्रेम से बचाया हुआ धन हामिद के पास जाने से नहीं रूक पाता। वैसे ही सोमा बुआ के पास उनके मृत बेटे की आखिरी निशानी के बतौर बची हुई अंगुठी है सो उनकी दृष्टि न्यौता पूरन सामग्री पर जाती है। वह कैसे पूरा होगी। पैसा तो अतिरिक्त कुछ है नहीं अब वह अंगुठी ही बेचना एक मात्र उपाय दिखता है। अब सोमा बुआ बरसो से बचाया हुआ प्रेम निशानी समधियाने के हस्तान्तरित करके उस पचीस वर्षों के सूने पन को समाप्त करके एक नया सम्बन्ध स्थापित करना चाहती हैं।

''इधर–उधर करके एक छोटी सी डिबिया निकाली बड़े जतन से उसे खोला उसमें सात रुपये और कुछ रेजकारी पड़ी थी और एक अंगुठी थी बुआ का अनुमान था कि रुपये कुछ ज्वादा होगें, पर सात ही निकले तो सोच में पड़ गयी कि रईस समधियों के घर में कितने रूपयों से बिन्दी भी नहीं लगेगी और उनकी नजर अंगुठी पर गयी।[5]

समाज की हर व्यावहारिक स्थिति मन्नू भण्डारी को पता है पुत्र वियोग में पति सारी गृहस्थी का भार पत्नी पर छोड़कर समाज से विमुक्त हरिद्वार जाकर सन्यास लेता है। अब पत्नी तो पति के समान कही जा नहीं सकती। वह लाचार है वह विद्रोह नहीं कर सकती। भारतीय नारी का स्वभाव सोमा बुआ में कूट–कूट कर भरा है। अगर यह पश्चातत्य नारी का चरित्र होता तो पति से झगड़कर अपने साथ घर पर रहने के लिए मजबूर करती और अपने ऊपर उनका अधिपत्य स्वीकार नहीं करती। लेकिन यहॉ सन्यासी जी महाराज को सोमा बुआ के अनुसार नहीं रहना पड़ता।

सोमा बुआ समाज में पति के सामने या किसोरी लाल के सामने निरीह क्यों लगती है? क्यों नहीं सभी को इनके सामने झुकना पड़ता। यहॉ बुआ हर त्रासदी से गुजर रही है। फिर भी समझौता करती हुई दिखाई दे रही है। ऐसा क्यों?

एक साक्षात्कार में मन्नू भण्डारी जी से पूछा गया कि क्या कारण है कि आपकी नायिकाए त्रासदी से गुजरती हैं तो भी समझौता करती हुई दिखाई देती है। या अपने जीवन के विसंगतियों को पहचान तो लेती है पर विद्रोह नहीं करती। तो उन्होंने फौरन उत्तर दिया था ''यह बताओ हमारे भारतीय समाज में कितनी औरते है जो विद्रोह का झण्डा हाथ में लेकर बगावत पर उतर आती है। जब जीवन में यह नहीं होता तो कहानी में ऐसा होते हुए कैसे दिखा सकते है। आज मन्नू जी के उस जवाब को याद करते हुए डा0भीमराव अम्बेडकर का यह वक्तव्य याद आता है कि शोषितों को शोषण की पहचान करवाना जरूरी है। विद्रोह करना तो वह अपने आप सिख लेगा।[6]

हमारे भारतीय समाज में देखा जाता है कि जब किसी भी पुरूष या स्त्री का सामाजिक सरोकार खण्डित हो रहा हो तो वह आहत हो जाता है। चाहे वह कोई परिवार का सदस्य ही क्यों न हो। बुआ की सामाजिक मर्यादा खण्डित होने में अगर कोई दोषी है तो वह उनका पति। इसी संदर्भ में रामदरस मिश्र कहते है कि– ''वह पत्नी को अकेलापन देकर उसे अपने ढंग से यह अकेलापन काटने का अधिकार भी नहीं देता।''

सोमा बुआ का यह अकेलापन दिन–प्रतिदिन अविशाप बनता जा रहा है।

हमारे समाज की संरचना ही ऐसी है कि कोई भी स्त्री कभी भी अकेली बना दी जायेगी। अगर स्त्री बुढ़िया या परित्यक्तता नहीं है तो क्या वह अकेलापन से मुक्त है? ऐसा आये दिन देखा जाता है कि पूरा भरे

परिवार में सभी लोगों के बीच होते हुए भी स्त्री अपने आप को अकेली महसूस करती है। बुढ़ापा शब्द स्त्री जीवन को एक भिन्न अर्थ में अलग करता है। सोमा बुआ बुढ़िया है और समाज की दृष्टि से उपेक्षित भी जब वे लोगों के घरों में त्यौहार या किसी खास मौके पर जाती है तो छाती फाड़ कर काम करती है। उनका कार्य किसी परिश्रमी स्त्री से कम नहीं होता। लेकिन उनकी श्रमशीलता का कोई सम्मान नहीं दिखता। स्त्री द्वारा किये गये कायों को पुरुष समाज कोई जगह निर्धारित नहीं करता।

सोमा बुआ समाज द्वारा तय किये गये मापदण्डों बुढ़ापा आते ही खो देती हैं। इसलिए वह पुरुषवादी समाज द्वारा बेकार मान ली जाती है। इस दृष्टि से उनका किया गया श्रम एक दास या मजदूर के श्रम से अधिक नहीं गिना जाता। इस प्रकार वह अपनी सामाजिक नाकार की भूमिका को मिटाने के लिए वह अपने श्रम द्वारा समाज में सम्बन्धों के निर्माण की तरफ जाना चाहती है। लेकिन समाज उन्हें उचित सम्मान नहीं देता पाता है। जबकि अपने हित के लिए उस श्रम का भरपुर उपयोग करता है।

''वर्ष 1934 ई0 में महादेवी वर्मा ने अपने निबन्ध हिन्दू 'स्त्रीत्व का पत्नित्व' में बहक साफ शब्दों में भारतीय स्त्री की सामाजिक स्थिति की बात कह दी थी। भारतीय स्त्री की सामाजिक स्थिति का इतिहास भी विक्रीत से विक्रीतर होने की कहानी मात्र है। बीती हुई शताब्दियॉ उनके सामाजिक प्रासाद के लिए नींव के पत्थर नहीं बनी। बरन उसे ढहाने के लिए ब्रजपात बनती रही हैं। फलतः उनकी स्थिति उत्तोंतर दृढ़ तथा सुन्दर होने के बदले दुर्बल और कुत्सित होती गयी।[7]

इस तरह हमारा समाज एक वृद्ध स्त्री के श्रम का दोहन करने के बावजूद उसे स्वीकारता नहीं है और उनके कार्यों को महत्वहीन तो समझता ही है। साथ ही सामाजिक सम्बन्ध निर्माण की प्रक्रिया को बाधित और खारिज करता है। स्त्री का स्वाभिमान जब इस स्थिति से टकराता है तो वह स्वयं को अकेली महसूस करती है। एक सामाजिक प्राणी कहे जाने वाला मनुष्य जिस प्रकार व समाज में अपनी सुदृढ़ स्थिति बनाना चाहता है वैसे ही सोमा परिश्रम से अपना समाज निर्माण करना चाहती है।

पति के साथ दुख बाटना भारतीय समाज की एक कल्पित स्थिति है। लेकिन बुआ की जिन्दगी उनके पति के आने पर उन्हीं के आस–पास ठहरा सी जाती है और बुआ पूरी तरह सामाजिकता से कट जाती है। पति के जाते ही बुआ का यह रूका हुआ बॉध टूट जाता और पूर्व की भॉति आस–पास के लोगों के साथ रहकर अपना जीवन व्यतीत करने लगती है। पति के संग एक दुखद यथार्थ भारतीय दाम्पत्य के खोखले आदर्श के रेशे उधेड़ देता है। इसका समाधान कहानी में सोमा, बुआ जो पति का संग साथ न रह पाना पुत्र वियोग दोनों को समस्या का समाधान बुआ अपने श्रम से निर्मित समाज में देखती है। इसके लिए वे किसी बुलावे का इन्तेजार नहीं करती। उनके लिए तो पूरा मुहल्ला ही उनका घर है। यह समाज के भीतर स्त्री के जीने की मानवीय इच्छा है। इसलिए जो उन्हें अपने यहॉ नहीं बुलाता उन्हें माफ कर देती और स्वयं यह स्वीकार करती कि दरअसल सामाजिक उपेक्षा जान–बुझकर नहीं की गयी और स्वयं को दिलाशा देते हुए कहती। ''

बेचारे इतने हंगामे में बुलाना भूल गये तो मैं भी मानकर बैठ जाती.... मैं तो अपने मन की बात जानती हूँ '' आज हरखू नहीं है इसी से दूसरों को देखकर मन भरमाती रहती है।''[8]

सोमा, बुआ एक ऐसा मनचीता समाज निर्माण करने की जिद में लगी है जिसमें स्त्री सहज व स्वभाविक रूप से अपने व्यक्तित्व के साथ शामिल हो सके। लेकिन समाज इतना निर्दयी ठहरा कि मानों वह चीख–चीख कर उनसे कह रहा कि हम ऐसी स्त्री को सम्मान देने के लिए तैयार नहीं है। जो पति व पुत्र के साथ न हो। लेकिन बुआ की जीजिविसा यह है कि उनसे लगातार जूझती रहती है। मानों हार मानने के लिए तैयार ही नहीं है। वह समाज द्वारा तिरस्कृत और अपने एक मात्र पुत्र को खो चुकने के कारण पति द्वारा प्यात्य जैसी स्थिति में है फिर भी क्या है? कि हर दुख को भूल कर समाज में अपना वजूद बनाये रखने के लिए उनको मजबूर तो कर रही रहा है साथ–साथ वह सामुदायिक हलचलों से जोड़े रखना चाहता है। यह वह हजारी प्रसाद द्विवेदी के समाज के भीतर किये गये महतकर्म को बड़ा तप मानने जैसे तर्क के साथ बड़ा तप करती दिखायी देती है। ''एकान्त का तप बड़ा तप नहीं है समाज में जाओ''[9] आचार्य जी की यह बात बुआ पर सटीक उतरती है।

साठ के दशक की स्त्री के नये रूप में सोमा, बुआ का उदय होता है। जो अपने घर की चाहरदीवारी में घूटकर दब्बू जीवन जीने वाली की अपेक्षा सामाजिक जीवन में अपनी स्पष्ट मॉगों, जरूरतों के अनुरूप भागीदारी करने वाली दिखने लगी हैं। वह भारतीय समाज में कैसी स्थिति बनाना चाहती है जिसके लिए अपने बेटे की एक मात्र निशानी बेचने से भी नहीं चुकती। यह कल्पना से परे है। वृद्ध बुआ बार–बार

समाज से हारने के बाद भी पुनः उसी समाज में लौटती है। गिर कर पुनः उठने का साहस दिखाती हैं। जैसे पूरा समाज ही उनकी सम्पत्ति है। यूँ कहे कि उनके पूरे जीवन में समाज ही उनकी सम्पत्ति है। जो कि आषाढ का एक दिन की मलिका के इस कथन से, ''मलिका का जीवन उसकी अपनी सम्पत्ति है।[10]

प्रेम सम्बन्धों में भी तत्कालिक समाज के प्रति संसलिस्टता या फिर व्यक्तित्व निर्माण के जिन अनछुए पहलूओ को मन्नू भण्डारी ने इस कहानी में उभारा है। वह वास्तव में इससे नई कहानी में प्रेम और सामाजिकता की निर्णायक रचना सिद्ध होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1– पृष्ठ संख्या–234 – अकेली कहानी संग्रह (मन्नू भण्डारी)
2– पृष्ठ संख्या–235 – अकेली कहानी संग्रह (मन्नू भण्डारी)
3– पृष्ठ संख्या–120 – प्रतिनिधि कहानियॉ (मन्नू भण्डारी)
4– पृष्ठ संख्या–175 – पाखी –प्रेम विशेषांक 2020
5– पृष्ठ संख्या–122 – प्रतिनिधि कहानियॉ (मन्नू भण्डारी)
6– पृष्ठ संख्या–143 – पाखी–मन्नू भण्डार विशेषांक 2016
7– पृष्ठ संख्या–41 – पाखी–मन्नू भण्डार विशेषांक 2016
8– पृष्ठ संख्या–120 – प्रतिनिधि– कहानियाँ (मन्नू भण्डारी)
9– पृष्ठ संख्या–42 – पाखी–मन्नू भण्डार विशेषांक 2016
10– पृष्ठ संख्या–17 – आषाढ का एक दिन (नाटक–मोहन राकेश)

दलित शब्द का अवधारणात्मक विश्लेषण

दीप्ति रश्मि*

सारांश

दलित शब्द का अवधारणात्मक विश्लेषण अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन व्यक्तियों को दर्शाता है जो शोषण और उत्पीड़न के शिकार हुए हैं। इस शब्द का शाब्दिक अर्थ 'दलन किया हुआ' है, और यह उन समुदायों को संदर्भित करता है जिन्हें उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों से वंचित किया गया है। डॉ. भीमराव अंबेडकर के आंदोलन के बाद, दलित शब्द का उपयोग विशेष रूप से हिंदू समाज के सबसे निचले पायदान पर स्थित जातियों के लिए किया गया। प्राचीन हिंदू धर्म ग्रंथों में दलित समुदायों को 'अंत्यज', 'अस्पृश्य', 'चांडाल', 'अवर्ण' और 'पंचमवर्ण' जैसे नामों से पुकारा गया। इस शब्द का सबसे पहला उपयोग *1831* में मोल्सवर्थ डिक्सनरी में 'डिप्रेस्ड' के रूप में किया गया था। संस्कृत साहित्य में 'दल' धातु से व्युत्पन्न 'दलित' का अर्थ है 'तोड़ना' या 'कुचलना'।

समाजशास्त्र में दलित शब्द का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि यह न केवल एक शब्द है, बल्कि एक गहरी सामाजिक और सांस्कृतिक धारा का प्रतिनिधित्व करता है। एलिनर जिलियट के अनुसार, दलित वे लोग हैं जिन्हें उच्च सामाजिक दर्जे के लोगों ने जान-बूझकर दबाया और कुचल दिया है। बी. आर. अंबेडकर के अनुसार, दलित जातियों में निम्न श्रेणी के दस्तगीर और सेवक जातियां शामिल हैं जो परंपरागत रूप से निम्न कार्यों में संलग्न हैं। दलित शब्द का अवधारणात्मक विश्लेषण हमें समाज में व्याप्त असमानता और अन्याय की गहरी समझ देता है। यह एक सामाजिक आंदोलन का प्रतीक भी है जो समाज में समानता, न्याय और गरिमा की मांग करता है। वर्तमान में भी, दलित समुदायों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है और उन्हें समानता और सम्मान के लिए संघर्ष जारी रखना होगा।

बीजशब्द: दलित, सामाजिक आन्दोलन, समानता, न्याय और सामाजिक प्रस्थिति

परिचय

'दलित' शब्द का शाब्दिक अर्थ 'दलन किया हुआ' होता है। इसका उपयोग उन व्यक्तियों के लिए होता है, जिनका शोषण या उत्पीड़न हुआ है। रामचन्द्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ बताया है। "Dalit" शब्द का अर्थ है "नीच" या "अपमानित"।

अस्पृश्यता और सामाजिक उत्पीड़न

दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। उसे कठोर और गंदे काम करने के लिए बाध्य किया गया है। उसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया है। समाज के उच्च जातियों ने इन पर सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की है। यही वे जातियां हैं जिन्हें अनुसूचित जातियां कहा जाता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

यह शब्द उन समुदायों को संबोधित करता है जो अपने स्थान के कारण अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते हैं और सामाजिक अपमान का सामना करते हैं। पिछले छह-सात दशकों में 'दलित' पद का अर्थ काफी बदल गया है। डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर के आंदोलन के बाद यह शब्द हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर स्थित सैकड़ो वर्षों से अस्पृश्य समझी जाने वाली तमाम जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयोग होता है। अब दलित पद अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की आंदोलनधर्मिता का परिचायक बन गया है। भारतीय संविधान में इन जातियों को अनुसूचित जाति नाम से जाना जाता है। भारतीय समाज में वाल्मीकि या भंगी को सबसे नीची जाति समझा जाता रहा है और उनका पारंपरिक पेशा मानव मल की सफाई करना रहा है। परन्तु आज के समय में इस स्थिति में बहुत बदलाव आया है।

दलितपन का प्राचीन और आधुनिक संदर्भ

दलित शब्द आधुनिक है किन्तु दलितपन प्राचीन है। प्राचीन हिन्दू धर्म ग्रंथों में जिनके लिए 'अन्त्यज', 'अस्पृश्य', 'चण्डाल', 'अवर्ण' तथा 'पंचमवर्ण' शब्द प्रयुक्त किए गये हैं, वहीं आज के समाज में दलित के नाम से जाने जाते हैं। इस शब्द का

* पी–एच.डी. शोधछात्रा, समाजशास्त्र विभाग, श्री महंथ रामाश्रयदास पी.जी. कॉलेज, भुड़कुड़ा, गाजीपुर

सर्वप्रथम प्रयोग 1831 में मोल्सवर्थ डिक्सनरी में डिप्रेस्ड के रूप में किया गया था। व्युत्पत्ति के आधार पर दलित शब्द की उत्पत्ति संस्कृत साहित्य के 'दल' धातु से हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ है तोड़ना अथवा कुचलना। संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुम में दलित शब्द का अर्थ टूटा हुआ, कटा हुआ तथा पिसा हुआ दिया गया है।

शब्दार्थ और व्युत्पत्ति

मानक अंग्रेजी-हिन्दी कोश में दलित शब्द के लिए 'डिप्रेस्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसका अर्थ है दबाना, कुचलना, रूलाना तथा झुकाना। इसी प्रकार दलित वर्ग के लिए 'अछूत', 'हरिजन', 'अस्पृश्य' तथा 'पद्लित' आदि शब्द दिए गए हैं। संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर में दलित शब्द का अर्थ मसला हुआ, मर्दित, रौदा, कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ दिया गया है। मानक हिन्दी कोश में दलित शब्द का तात्पर्य जिसका दमन हुआ हो, जिसे पनपने न दिया गया हो, वर्णित है। हिन्दी शब्द सागर में श्याम सुन्दर दास ने दलित शब्द का अर्थ जिसे दबाकर रखा गया है, बतलाया है।

सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य

एलिनर जिलियट दलित पद को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि ''जिसे तोड़ दिया गया हो और जिसे उसके सामाजिक दर्जे से ऊपर बैठे लोगों ने जान-बूझकर नियोजित रूप से कुचल डाला हो।'' उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'दलित' पद से हमारा तात्पर्य उस अर्थ से है जिसमें अस्पृश्यता, कर्म सिद्धांत और जातिगत श्रेणीक्रम का नकार निहित है और जिसे जाति श्रेणीक्रम में ऊपर बैठे लोगों द्वारा जान-बूझकर पनपने नहीं दिया गया है, तथा जिनका शोषण सदियों से होता रहा है।

दलित वर्ग की परिभाषा और विश्लेषण

बी. आर. कृष्ण अय्यर के अनुसार ''दलित वर्ग से तात्पर्य जनसंख्या के उस शोषित व पीड़ित भाग से है जो परम्परागत आधार पर सदियों से सामान्य सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक आधार पर अपने अधिकारों से वंचित रहा हैं।'' लेलाह दुश्किन के अनुसार ''दलित वर्ग के अंतर्गत वे हिन्दू जातियां सम्मिलित हैं जिनके सम्पर्क में आने पर उच्च जातियों के हिन्दुओं को शुद्धिकरण करना पड़ता है।'' बी. आर. अम्बेडकर के अनुसार ''दलित वर्ग के अंतर्गत वे हिन्दू जातियां समाविष्ट हैं जिन्हें अपवित्रकारी समझा जाता है। इसमें निम्न श्रेणी के दस्तगीर जैसे- मोची, बुनकर, धोबी, भंगी तथा बसोर इत्यादि तथा सेवक जातियां (जैसे- चमार- चमड़े का कार्य करने वाली, हेला-डफंली बजाने वाली जातियों को सम्मिलित किया जाता है)। जो रक्त और नातेदारी सम्बंधों के आधार पर समाज में परम्परागत रूप से निम्न कार्यों को करती आ रही हैं। वास्तव में बी. आर. अम्बेडकर का यह विचार है कि जाति वैचारिकी पर आधारित है। अम्बेडकर दलित जाति के अंतर्गत सेवक और निम्न श्रेणी के उन दस्तगीरों को सम्मिलित करते हैं जो सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टिकोण से न केवल पिछड़े हैं, बल्कि निम्न श्रेणी के व्यवसायों में भी संलग्न हैं।

दलित वर्ग का कार्यात्मक विभाजन

पाटनकर एवं ओमवेटन ने दलित वर्ग को उनके कार्यों के आधार पर दो श्रेणियों में विभाजित किया है- पहला, जो आजीविका के लिए परम्परागत पैतृक व्यवसायों को करते हैं जैसे- धोबी, खटीक, धरकार, चमार इत्यादि। दूसरा, परम्परागत कार्यो के साथ-साथ भूस्वामी के यहां कृषि, मजदूर के रूप में कार्य करते हैं जैसे महाराष्ट्र में महार तथा उत्तर भारत में चमार इत्यादि।

अर्थ और निष्कर्ष

उपरोक्त वर्णित परिभाषाओं एवं विशेषताओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रस्तावित अध्ययन में दलित वर्ग से हमारा तात्पर्य उन सभी जातियों से है जो जातीय संस्तरण में सबसे निचले पायदान पर हैं और जिन्हें सदियों से मानवीय अधिकारों से वंचित करके शोषण किया जाता रहा है। जन्म पर आधारित अनुष्ठानिक पवित्रता-अपवित्रता के कारण सार्वजनिक स्थलों पर प्रवेश वर्जित किया गया था तथा अपवित्रकारी व्यवसायों को करने के लिए बाध्य किया गया था। यह अशुद्ध ही जन्म लेते है, अशुद्ध ही जीवन-यापन करते हैं। भारतीय संविधान में जिन्हें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति से संबोधित किया गया है, उन्हीं अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए प्रस्तावित अध्ययन में दलित शब्द का प्रयोग किया गया है।

संदर्भ और वर्तमान स्थिति

दलित शब्द के विभिन्न संदर्भों और अर्थों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि यह केवल एक शब्द नहीं, बल्कि एक सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धारा का प्रतिनिधित्व करता है। यह उन समुदायों की पीड़ा, संघर्ष और अस्तित्व की कहानी है जिन्होंने सदियों से समाज में अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया है। आज, दलित समाज ने अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाई है और सामाजिक न्याय के लिए निरंतर प्रयास कर रहा है। समाज में इस परिवर्तन के बावजूद, दलित समुदायों को अभी भी अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है और उन्हें समानता और सम्मान के लिए संघर्ष जारी रखना होगा।

निष्कर्ष

दलित शब्द का अवधारणात्मक विश्लेषण हमें इस बात की गहरी समझ देता है कि किस प्रकार यह शब्द समाज में व्याप्त असमानता और अन्याय को प्रकट करता है। यह केवल एक सामाजिक वर्ग नहीं, बल्कि एक आंदोलन है जो समाज में समानता, न्याय और गरिमा की मांग करता है। दलित समुदाय की वर्तमान स्थिति और उनके संघर्ष हमें यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि हम किस प्रकार एक समतामूलक समाज का निर्माण कर सकते हैं, जहाँ हर व्यक्ति को समान अधिकार और अवसर मिले।

सन्दर्भ सूची

1. रामचन्द्र वर्मा: हिन्दी शब्दकोश, शाब्दिक अर्थ और परिभाषाएँ।
2. भीमराव अम्बेडकर: जाति के उन्मूलन के लिए संघर्ष, सामाजिक न्याय का आंदोलन।
3. मोल्सवर्थ डिक्सनरी (1831): Depressed के रूप में दलित शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग।
4. संस्कृत साहित्य: दल धातु से उत्पत्ति, शाब्दिक अर्थ और उपयोग।
5. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुम: दलित शब्द का अर्थ-टूटा हुआ, कटा हुआ तथा पिसा हुआ।
6. संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर: दलित शब्द का अर्थ मसला हुआ, मर्दित, रौदा, कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ।
7. मानक हिन्दी कोश: दलित शब्द का तात्पर्य जिसका दमन हुआ हो, वर्णित।
8. श्याम सुन्दर दास: हिन्दी शब्द सागर, दलित शब्द का अर्थ।
9. एलिनर जिलियट: दलित पद की परिभाषा, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण।
10. बी. आर. कृष्ण अय्यर: दलित वर्ग की परिभाषा, जनसंख्या का शोषित व पीड़ित भाग।
11. लेलाह दुश्किन: दलित वर्ग के अंतर्गत हिन्दू जातियां।
12. बी. आर. अम्बेडकर: दलित वर्ग, निम्न श्रेणी के दस्तगीर और सेवक जातियां।
13. पाटनकर एवं ओमवेटन: दलित वर्ग का कार्यात्मक विभाजन, परम्परागत पैतृक व्यवसाय और कृषि मजदूरी।
14. भारतीय संविधान: अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की मान्यता।

डिजिटल इंडिया के विशेष संदर्भ में भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की भूमिका

राकेश रौशन*

सारांश :

संसदीय व्यवस्था में कार्यपालिका, विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। यह उत्तरदायित्व, राजनीतिक, वित्तीय आदि संदर्भों में होता है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की लेखा परीक्षा प्रतिवेदन, भारत में कार्यपालिका की विधायिका के प्रति वित्तीय उत्तरदायित्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। संस्थाएं, देश और काल की सापेक्ष होती हैं। बदलते वक्त और उसकी आवश्यकताओं की सुचिंतित और सुनिश्चित समाधान में ही किसी भी संस्था की प्रासंगिकता निहित होती है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक इसका सुंदर उदाहरण है। प्रस्तुत शोध पत्र नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के संक्षिप्त इतिहास, संवैधानिक प्रावधानों के साथ ही कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रयोग की आवश्यकताओं, इससे जुड़ी चुनौतियों, इसके निराकरण और इस संदर्भ में CAG के महत्वपूर्ण कार्यों को रेखांकित करने का एक प्रयास है।

मूल शब्द : नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक, डिजिटल इंडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, रिमोट ऑडिट, संसदीय व्यवस्था,साइबर सुरक्षा, पारदर्शिता, सूचना प्रौद्योगिकी, जन सहभागिता

परिचय:

"मेरा मानना है कि यह गणमान्य व्यक्ति या अधिकारी संभवतः भारत के संविधान का सबसे महत्वपूर्ण अधिकारी है। वह एकमात्र व्यक्ति है जो यह सुनिश्चित करेगा कि संसद द्वारा स्वीकृत व्यय, विनियोग अधिनियम में संसद द्वारा निर्धारित राशि से अधिक ना हो या उसमें कोई परिवर्तन ना हो।[1] नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक का वर्णन भारतीय संविधान के भाग 5 के अनुच्छेद 148 से 151 तक किया गया है। अनुच्छेद 148 भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की नियुक्ति, शपथ और सेवा की शर्तों से संबंधित है। अनुच्छेद 148(1) के अनुसार, भारत का एक नियंत्रक महालेखा परीक्षक होगा जिसको राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा और उसे उसके पद से केवल उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर हटाया जा सकता है जिस रीति से और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जाता है।[2] इस महत्वपूर्ण पद के संक्षिप्त इतिहास की बात करें तो 1858 में पहली बार महालेखाकार का कार्यालय स्थापित किया गया था। 1860 में पहले ऑडिटर जनरल के रूप में सर एडवर्ड ड्रमंड को नियुक्त किया गया था। भारत सरकार अधिनियम,1935 में संघीय ढांचे में प्रांतीय लेखा परीक्षकों की व्यवस्था ने इस पद को और शक्ति दी। इस अधिनियम में इस पद की नियुक्ति,सेवा-शर्तों और कर्तव्यों का भी प्रावधान किया गया था।[3]

कार्य व शक्तियां :

CAG अधिनियम,1971 द्वारा CAG का कर्तव्य संघ सरकार के साथ राज्य सरकारों के लिए भी लेखांकन और लेखा परीक्षा का कार्य निर्धारित किया गया। नियंत्रक महालेखा परीक्षक के कर्तव्य,शक्तियां और सेवा की शर्तें अधिनियम 1971 में चार बार अर्थात् 1976,1984,1987 और 1994 में संशोधन किया गया है। [4] 1976 में CAG को लेखांकन के दायित्व से मुक्त कर दिया गया। CAG के कार्य की महत्ता के कारण संविधान द्वारा उनके पद की स्वतंत्रता एवं सुरक्षा सुनिश्चित की गई है। इसके अंतर्गत उनके कार्यकाल की सुरक्षा, नियुक्ति के पश्चात उनके वेतन-भत्ते एवं सेवा शर्तों में अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकना शामिल है।

* सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, एस.एन. कॉलेज, शाहमल खैरा देव, रोहतास, बिहार

वह संघ, प्रत्येक राज्य और वैसे संघ शासित प्रदेश, जहां विधानसभा हो, से संबंधित सभी व्यय संबंधी लेखाओं की लेखा परीक्षा करता है। वह भारतीय संघ और प्रत्येक राज्य की आकस्मिक निधि और लोक लेखा से संबंधित सभी व्यय की लेखा परीक्षा करता है। वह संघ या राज्य सरकारों से अनुदान प्राप्त सभी निकायों तथा प्राधिकरणों, सरकारी कंपनियों एवं संबंधित नियमों की मांग पर अन्य निगमों एवं निकायों की प्राप्तियों और व्ययों की लेखा परीक्षा करता है। वह राष्ट्रपति या राज्यपाल के निवेदन पर स्थानीय निकायों सहित अन्य प्राधिकरणों की लेखा परीक्षा करता है। संविधान के अनुच्छेद *151* के अनुसार, वह संघ और राज्य सरकार के लेखों से संबंधित प्रतिवेदन क्रमशः राष्ट्रपति और संबंधित राज्य के राज्यपाल को देता है जो उसे क्रमशः संसद और राज्य विधानमंडल के पटल पर रखते हैं। [5] CAG को लोक लेखा समिति का मित्र,मार्गदर्शक और दार्शनिक कहा जाता है।वह ऋण, निक्षेप, निधि, जमा, अग्रिम बचत खाता और धन प्रेषण व्यवसाय से संबंधित केंद्रीय और राज्य सरकारों के सभी लेन-देन की लेखा परीक्षा करता है। वह राष्ट्रपति की स्वीकृति के साथ या राष्ट्रपति द्वारा मांगे जाने पर प्राप्तियों, स्टॉक लेखाओं और अन्य की लेखा परीक्षा करता है। वह केंद्र और प्रत्येक राज्य की प्राप्तियों और व्यय की लेखा परीक्षा स्वयं को यह संतुष्ट करने के लिए करता है कि राजस्व के कर निर्धारण, संग्रहण और उचित आवंटन पर प्रभावी निगरानी सुनिश्चित करने के नियम और प्रक्रियाएं निर्मित की गई हैं। अनुच्छेद *279* के अनुसार, वह किसी कर या शुल्क की शुद्ध आगमों का निर्धारण और प्रमाणन करता है। उसका प्रमाण पत्र अंतिम होता है।[6]

डिजिटल इंडिया *:*

भारत में भी पिछले कई दशक सूचना और संचार क्रांति का साक्षी रहा है। इसी संदर्भ में *1* जुलाई *2015* को प्रारंभ 'डिजिटल इंडिया इनीशिएटिव' महत्वपूर्ण है। डिजिटल आधारभूत संरचना सुदृढ़ करने, सेवाओं की डिजिटल डिलीवरी और वित्तीय समावेशन में वृद्धि कर भारत को डिजिटल रूप से सशक्त समाज तथा ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करने हेतु 'डिजिटल इंडिया इनीशिएटिव' प्रारंभ की गई थी। डिजिटल विभाजन में कमी, डिजिटल प्रसार में समानता, आर्थिक उन्नयन और जीवन की गुणवत्ता में व्यापक सुधार इसके प्रमुख उद्देश्य हैं।[7] डिजिटल इंडिया से ई-गवर्नेंस को भी बढ़ावा मिला क्योंकि इससे शासकीय सेवाओं तक आम आदमी की पहुंच सुगम हो गई। इससे शासकीय सेवाओं में कुशलता, पारदर्शिता और जन-सहभागिता में वृद्धि हुई।

डिजिटल इंडिया में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की भूमिका *:*

सूचना और डिजिटल क्रांति के कारण आवश्यक डाटा और वित्तीय जटिलताओं में भी तीव्र वृद्धि हुई है। परंपरागत तरीके से लेखा परीक्षा में समय भी अधिक लगता है। संस्थाएं देश और काल की सापेक्ष होती हैं। बदलते वक्त और उसकी आवश्यकताओं के सुचिंतित और सुनिश्चित समाधान में ही किसी भी संस्था की प्रासंगिकता निहित है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक इसका सुंदर उदाहरण है। CAG ने डिजिटल इंडिया का उपयोग कर लेखा परीक्षा को तीव्र और व्यापक बनाया है। CAG लोक लेखा परीक्षा प्रणाली को अधिक सुदृढ़ करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित वृहद भाषा मॉडल *(*लार्ज लेवल लैंग्वेज*)* अपनाने की प्रक्रिया में है। लार्ज लेवल लैंग्वेज किसी भी दस्तावेज का सारांश तैयार सकती है। विभिन्न दस्तावेजों से कुछ खास प्रवृत्ति या समानता ढूंढ सकती है। इससे तीव्र और सटीक निर्णय लेने में सहयोग मिलेगा। विभिन्न विभागों, सरकारी कंपनियों और स्थानीय सरकारों की आंतरिक लेखा परीक्षण में सुधार होगा। CAG के अनुसार, लोक लेखा परीक्षा प्रणालियों का डिजिटलीकरण उनकी प्राथमिकता है। इससे रिमोट ऑडिट, समयबद्ध प्रतिवेदन को बढ़ावा मिलेगा। इसमें एकीकृत वित्तीय प्रबंधन प्रणाली, सरकारी ई-खरीद प्लेटफार्म, ई-वाउचर प्रणाली, कार्य एवं लेखा प्रबंधन सूचना प्रणाली, डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम आदि शामिल है।

दूरस्थ लेखा परीक्षा :

दूरस्थ लेखा परीक्षा के संदर्भ में CAG के तीन प्रमुख लक्ष्य हैं : एक, उन सभी विभागों की दूरस्थ लेखा परीक्षा (रिमोट ऑडिट) करना,जिनके दस्तावेज़ डिजिटल हो चुके हैं। दूसरा, शहरी एवं ग्रामीण स्थानीय निकायों की लेखा परीक्षा भी इसमें शामिल है क्योंकि राष्ट्र की सकल घरेलू उत्पाद का आधा हिस्सा सिर्फ 15 शहरों से ही आता है। तीसरा, इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेज़ो में किसी प्रकार का फ़ेरबदल। महत्वपूर्ण है कि प्रत्यक्ष लाभ अंतरण के दस्तावेजों की दूरस्थ लेखा परीक्षा में ऐसे कई मामले संज्ञान में आए।

विभिन्न समझौते :

इसी संदर्भ में 20 मार्च, 2024 में कैग ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,दिल्ली के साथ एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर भी किया है। इस समझौते का उद्देश्य क्षमता निर्माण, कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग, अनुसंधान और विकास है। [8] नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने 24 फरवरी 2025 को लेखा परीक्षा कौशल में सुधार और सतत लेखा परीक्षा के लिए आईआईटी मद्रास के साथ समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किए। [9] इस समझौते के मुख्य क्षेत्रों में अनुसंधान और विकास सहयोग को बढ़ावा देना, पर्यावरण ऑडिट, साइबर सुरक्षा, उन्नत ऑडिटिंग, डाटा एनालिटिक्स आदि सम्मिलित है। नवंबर 2025 ई॰ में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक कार्यालय के एक बयान के अनुसार,अपने 200 से अधिक कार्यालयों में सुगम संचार और रिपोर्ट तैयार करने में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के उपयोग का पता लगाने और विचारों या साहित्यिक चोरी की पहचान करने के लिए बहुभाषी अनुवाद मंच भाषिणी का उपयोग करेगा। [10] भाषिनी संचार को सरल बनाएगा और आवश्यकतानुसार संसदीय समितियों, सरकारी कर्मचारियों के हकदारी संबंधी कार्य, शिकायत निवारण,हितधारकों तथा स्थानीय मीडिया के साथ काम करने के लिए यह अत्यधिक उपयोगी होगा।[11]

लेखा परीक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के लाभ एवं चुनौतियां :

लेखा परीक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता अपनाने के कुछ लाभ निम्नलिखित हैं :-फर्जीवाड़ा रोकने में मदद, तीव्र गति और उत्पादकता, व्यापक पहुंच और बेहतर विश्लेषण। वहीं इसकी कुछ चुनौतियां भी हैं, जैसे :- आधारभूत संरचना और दक्ष मानव संसाधन की कमी, तकनीकी चुनौतियां, विश्वसनीयता एवं पारदर्शिता सुनिश्चित करने के साथ नैतिक आयामों का आकलन भी शामिल है। इस संबंध में निवेश बढ़ाकर, सॉफ्टवेयर के साथ दक्ष कर्मचारियों की भर्ती, उपलब्ध मानव-संसाधन का नियमित प्रशिक्षण, उनके मध्य कृत्रिम बुद्धिमत्ता संबंधी प्रतिस्पर्धा आदि से इन चुनौतियों से पार पाया जा सकता है। लेखा परीक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए आई) का एकीकरण, चाहे वह लेखा प्रक्रिया में ए आई का उपयोग करना हो या ए आई प्रणालियों की लेखा परीक्षा करना हो; कई चुनौतियां प्रस्तुत करता है। सबसे पहले, लेखा उद्देश्यों के लिए ए आई एल्गोरिथम को लागू करने से जुड़ी तकनीकी बाधाएं हैं : जैसे कि विशाल डाटा सेट में विसंगतियों का पता लगाने या पैटर्न की पहचान करने में ए आई आधारित विश्लेषण की सटीकता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करना। पुनः ए आई निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में पारदर्शिता को सत्यापित करने और ए आई आधारित लेखा परीक्षा प्रक्रियाओं के नैतिक निहितार्थों का आकलन करने से संबंधित जटिलताएं उत्पन्न होती हैं। कैग कार्यालय में ए आई को लागू करते समय संभावित विभिन्न चुनौतियों और उन्हें दूर करने के तरीकों को इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है । [12]

1॰ ए आई के भविष्य की योजना बनाने की चुनौतियां : ए आई की तीव्र प्रगति और ए आई के क्षेत्र में मानकीकरण की कमी के कारण दीर्घकालिक योजना और पूर्वानुमान लगाना लगभग असंभव हो गया है। विभाग को ऐसी संरचना विकसित करनी होगी जो प्रौद्योगिकी के साथ-साथ विकसित होने में सक्षम हो।

2· बुनियादी संरचना की चुनौतियां : नई तकनीक को अपनाने के लिए उपयुक्त कौशल सहित विभिन्न संसाधनों की आवश्यकता होती है जो विभाग के लिए एक चुनौती हो सकती है। विभाग को आई को लागू करने के लिए आवश्यक संसाधनों के सुविचारित योजना बनानी चाहिए और उन्हें प्राप्त करना चाहिए।

3· योग्यता निर्माण : सार्वजनिक क्षेत्र के लिए तकनीकी रूप से कुशल कर्मचारियों का होना और इन्हें बढ़ाना हमेशा से एक चुनौती रहा है। विभाग को ऐसी व्यवस्था विकसित करनी होगी जिनके माध्यम से बाहर से कुशल कर्मचारियों को प्राप्त किया जा सके और साथ ही आंतरिक संसाधनों का विकास भी किया जा सके।

4· गोपनीयता : ए आई गोपनीयता संबंधी कई गंभीर चुनौतियां प्रस्तुत करती है, जिनमें डाटा उल्लंघन, प्रतिकूल हमले और ए आई सहायता प्राप्त हैकिंग शामिल है। विभाग को क्रॉस वैलिडेशन, संवेदनशीलता विश्लेषण और विविध डाटा सेट पर परीक्षण जैसी तकनीकों का उपयोग करके ए आई मॉडल की सटीकता और विश्वसनीयता का आकलन करने के लिए मजबूत मॉडल सत्यापन प्रक्रियाओं को लागू करना होगा। साथ ही अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त मानदंडों *(जैसे: आइएसओ,आईईसी, ओईसीडी और यूनेस्को द्वारा निर्धारित मान्यताओं)* का पालन करने से विभाग को जोखिमों को कम करने, जनता के विश्वास को बढ़ाने और कानूनी अनुपालन सुनिश्चित करने में मदद मिलेगी।

निष्कर्ष :

भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग लेखा परीक्षा प्रक्रिया को बेहतर बनाने के लिए अत्याधुनिक तकनीकों को अपनाने में अग्रणी रहा है। *GIS* विश्लेषण, मशीन लर्निंग, ए आई और उन्नत डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकों के उपयोग से भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग ने न केवल दक्षता में सुधार किया है बल्कि लेखा परीक्षा की सटीकता को भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया है। निस्संदेह कृत्रिम बुद्धिमत्ता अपरिहार्य है, इसलिए सूचना एवं प्रौद्योगिकी में इसका समावेश आवश्यक है। तकनीकी प्रगति के साथ कदम मिलाकर चलने से यह सुनिश्चित होगा कि विभाग पीछे ना जाए और जटिलताओं का प्रभावी ढंग से सामना कर सके। विभाग उपर्युक्त रणनीति के आधार पर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समयबद्ध कार्य योजना तैयार कर सकता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीकी लेखा परीक्षक को अतिरिक्त क्षमताएं प्रदान करती हैं।इससे लेखा परीक्षा की प्रभावशीलता बढ़ती है। ए आई रणनीति को अपनाने से भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग अपने संवैधानिक दायित्व को अधिक उत्साह के साथ पूरा करना जारी रख सकता है। कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग CAG को आर्थिक आंकड़ों में बढ़ती जटिलता के साथ समन्वय बनाने में सक्षम तो बनाएगा ही, यह डिजिटल इंडिया और ई-शासन की अवधारणा और वास्तविकता के अनुरूप भी है।

संदर्भ:

1. https://share.google/UKabRv5qs5TleFjGU
2. https://share.google/c436Qbx6xhOjkCKvU
3. https://www.drishtiias.com/hindi/national-organization/comptroller-auditor-general-of-india
4. https://share.google/QzEWouZ9jNr51LwBP
5. https://share.google/kEM1V6BeGRJTqI8O4
6. संवैधानिक प्रावधान | प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-I) गुजरात, राजकोट- https://share.google/30DPQ2ibgUu4RXxzT
7. डिजिटल इंडिया पहल के नौ वर्ष https://share.google/QDc2UBJY0GaSdWbyJ
8. CAG signs MoU with IIT Delhi on Artificial Intelligence - The Hindu https://share.google/uY4LBjilL0SLaG98A
9. आईआईटी मद्रास ने सीएसी कौशल में सुधार और स्थिरता के लिए सीएजी के साथ समझौते पर हस्ताक्षर किए - द हिंदू https://share.google/fbcZcMyZBAuBwM7JF

10. कैग अपने कार्यालयों में कृत्रिम मेधा मंच 'भाषिनी' का करेगा उपयोग – The Print Hindi
https://share.google/83WLPmiVx6uOkbnQm
11. PR-Hindi-Press-Release-updated-06911da527e1176-92517360.pdf
https://share.google/hDSE7He2S7zDDxALs
12. https://cag.gov.in/uploads/media/Artificial-Intelligence-Strategy-Framework-issued-by-CAG-of-India-068515070c7da65-91395536.pdf

मीरजापुर जनपद के नवपाषाणकालीन मृदभाण्ड परम्परा

प्रभाश दूबे*

मीरजापुर क्षेत्र की नवपाषाणिक मृदभाण्ड हस्तनिर्मित हैं। धान की भूसी यहॉ पर सालन के रूप में प्रयोग होती थी। मिट्टी भी भलीभॉति गुथी हुई नहीं होती थी। इनके बर्तन अधिकांशतः मोटी बारी के होते थे। किन्तु पतली तथा मध्यम मोटाई के बारी के भी पात्र के साक्ष्य मिलते हैं। इस जनपद से प्राप्त होने वाले बर्तन भलीभॉति पके नहीं होने के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। मीरजापुर सहित उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र से प्राप्त होने वाले मृदभाण्ड मुख्यतः चार प्रकार के मिलते हैं–

1. **रूक्षसतही मृदभाण्ड**
2. **डोरी छाप मृदभाण्ड**
3. **मार्जित लोहित (लाल) मृदभाण्ड**
4. **मार्जित कृष्ण (काले) मृदभाण्ड**

रूक्षसतही मृदभाण्डः–

मीरजापुर से प्राप्त इस मृदभाण्ड परम्परा में पात्रों की सतह को विशेष उपक्रम द्वारा खुरदरापन प्रदान किया जाता था। यहॉ पर कम तैयार की गई मिट्टी से हस्तगढ़ित पात्रों की सतह पर मिट्टी के ऐसे घोल का लेप किया जाता था, जिसमें भूसी आदि का मिश्रण हो। कम ऑच में पकाये जाने के बाद इन पात्रों की सतह को हल्के या गाढ़े लाल रंग के साथ खुरदरी की जाती थी। इस वर्ग के मृदभाण्डों में विविध प्रकार के कटोरे छिछली तश्तरियॉ चौड़े मुॅह हाड़ियॉ, प्रमुख पात्र के रूप में प्राप्त होते हैं।

डोरी छाप मृदभाण्डः–

मीरजापुर जनपद से प्राप्त होने वाले इस मृदभाण्ड परम्परा में भारतीय पुरातत्व विशेषकर विन्ध्य क्षेत्र के विशिष्ट पात्र रहे हैं। भारतीय नवपाषाण काल में यह सर्वप्रथम पूर्वी भारत के असम में ''दओजली हेडिंग'' और ''सरूतरू'' से प्राप्त होते हैं। विन्ध्य क्षेत्र में यह सर्वप्रथम सन् 1932 में कोल्डिहवा से मिले हैं, इसके अतिरिक्त महगड़ा, कुनझुन एवं मीरजापुर में इन्दारी एवं टोकवा के नवपाषाणिक पुरास्थल से प्राप्त किये गये हैं। इसके अतिरिक्त मध्य गंगा घाटी में भी चिरांद, सोहगौरा, लहुरादेवा से भी इस प्रकार के मृदभाण्ड प्राप्त किये गये हैं।

सामान्यतः इस वर्ग के मृदभाण्ड पात्र परम्परा को अर्द्ध–शुद्ध मिट्टी के लोदों से बनाया गया था, जिसके कारण इनके किनारे खुरदरे मिलते हैं। कम ऑच पर पके होने के कारण इनकी बाहरी सतह धूमिल लाल एवं गेरूया रंग की होती थी। परन्तु मध्य का भाग काला या स्लेटी होने का साक्ष्य प्राप्त होता है। यहॉ की बर्तनों के बाहरी सतह पर डोरी का छाप का अंकन प्राप्त होता है तथा बाहरी ओर हथेली एवं अंगुलियों से छापे भी बनाये गये हैं। डोरी छाप मृदभाण्ड परम्परा में सामान्यतः गहरे तथा छिछले कटोरे, बेसिन तथा गोलाकार बर्तन प्रमुख रूप से प्राप्त होते हैं।

मार्जित लोहित (लाल) मृदभाण्डः–

मीरजापुर जनपद की नवपाषाणिक संस्कृतियों की एक प्रमुख विशेषता मार्जित या चमकदार लोहित (लाल) मृदभाण्ड है। हाथ से निर्मित यह मृदभाण्ड पात्र भी कम ऑच में पकाये गये हैं। पकाने से पूर्व सतह पर मिट्टी का लेप लगाया गया है। इसीलिए घिसकर चमकीला भी बनाया गया है तथा पकने के बाद इनकी बाहरी सतह लाल हो जाती थी।

मार्जित कृष्ण (काले) मृदभाण्डः–

इस वर्ग के मृदभाण्ड में भी चमकीली लाल सतह वाले पात्रों का गढ़न किया जाता था। परन्तु इनको पकाने में ऑवा एवं धुऑदार ऑच से पात्र का रंग पकने के बाद स्लेटी या काला हो जाता था। इस प्रकार मृदभाण्ड परम्परा में भी प्रमुख रूप से छिछले पात्रों की ही प्रमुखता रही है।

* शोध छात्र, प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, सल्तनत बहादुर पी.जी. कॉलेज, बदलापुर, जौनपुर सम्बद्ध वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

इस प्रकार इस क्षेत्र से प्राप्त इन सभी मृदभाण्ड परम्पराओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ये मृद भाण्ड अनेक समकालीन संस्कृतियों के सांस्कृतिक सम्बन्धों का मिश्रण रहे होंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

केसरी, अर्जुनदास : लौरिकायन, लोकयार्ता प्रकाशन, राबर्ट्सगंज, 1982
गुप्त, जगदीश : प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1967
गुप्त, परमेश्वरी लाल : गुप्त साम्राज्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, याराणसी, 1991
गैरोला, वाचस्पति : भारतीय चित्रकला, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर बंग्लो रोड, दिल्ली, 1990
गोयल, श्रीराम : प्रागैतिहासिक मानव और संस्कृतियाँ, इलाहाबाद, 1981
चोपड़ा, सरला : प्राचीन भारतीय पथ, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1987
जे०एन०पाल० : बिगनिंग ऑफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, 1980
शिला, एल० ह्वीनर : गुप्त दू पात स्कल्पचर्स, रीप्रिंट फ्राम आर्टिक्स एशिया, स्वीट्जरलैण्ड, 1962
शेरिंग : हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स, बॉ०1, लन्दन ट्रबनर एण्ड कम्पनी, 1872

आधुनिकीकरण का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

आरती कुमारी*

शोध सार -

भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध संस्कृतियों में से एक है। इसकी जड़ें वेदों, उपनिषदों, पुराणों, महाकाव्यों और लोक परंपराओं में गहराई से निहित हैं। भारतीय संस्कृति ने सदियों से विविधता, सहिष्णुता, आध्यात्मिकता और सामाजिक मूल्यों को संजोए रखा है। परंतु आधुनिक युग में विज्ञान, तकनीक, औद्योगीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव से भारतीय संस्कृति में गहरे परिवर्तन हुए हैं। आधुनिकीकरण ने भारतीय समाज को नई दिशा दी है, लेकिन इसके साथ ही कई चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं।

विशिष्ट शब्द - आधुनिकीकरण, संस्कृति, शहरीकरण, परम्पराएं आदि

भारतीय संस्कृति पर उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव व्यापक रूप में पड़ा है,इसका मूल वजह आधुनिकरण की प्रक्रिया इतनी तेज गति से चल रही है की इसे रोकना किसी के वश में नही है। आधुनिकीकरण का अर्थ है परंपरागत जीवन शैली से निकलकर विज्ञान, तकनीक, शिक्षा, औद्योगिक विकास और वैश्विक दृष्टिकोण अपनाना। यह केवल भौतिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में भी परिवर्तन लाता है। भारतीय संस्कृति की विशेषता उसकी विविधता और अनुकूलन क्षमता है। यहाँ विभिन्न धर्म, भाषाएँ, कला रूप और परंपराएँ सह-अस्तित्व में रही हैं। आधुनिकीकरण ने इस विविधता को प्रभावित किया है और कई बार इसे चुनौती भी दी है।(1)

शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिकीकरण ने क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने भारतीय समाज को वैज्ञानिक दृष्टिकोण दिया। महिलाओं और पिछड़े वर्गों को शिक्षा के अवसर मिले। तकनीकी शिक्षा ने रोजगार के नए अवसर खोले और युवाओं को आत्मनिर्भर बनाया। इंटरनेट और मोबाइल ने संचार को सरल बनाया। ई-गवर्नेंस और डिजिटल इंडिया ने प्रशासन को पारदर्शी बनाया। चिकित्सा और विज्ञान में प्रगति से जीवन स्तर बेहतर हुआ। इन सबने भारतीय समाज को आधुनिकता की ओर अग्रसर किया। सामाजिक परिवर्तन भी आधुनिकीकरण का महत्वपूर्ण परिणाम है। जाति और लिंग आधारित भेदभाव में कमी आई है। महिलाओं की भागीदारी राजनीति और रोजगार में बढ़ी है। युवाओं में आत्मनिर्भरता और उद्यमिता की भावना बढ़ी है। भारतीय योग, आयुर्वेद और संस्कृति को विश्वभर में मान्यता मिली है। भारतीय प्रवासी समुदाय ने विदेशों में भारतीय परंपराओं को जीवित रखा है। इस प्रकार आधुनिकीकरण ने भारतीय संस्कृति को वैश्विक पहचान दिलाई है।(2)

लेकिन इसके साथ ही कई नकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिले हैं। संयुक्त परिवार प्रणाली कमजोर हुई है। व्यक्तिगतता और निजता को अधिक महत्व मिलने लगा है। पश्चिमी संस्कृति का अंधानुकरण बढ़ा है। पारंपरिक पहनावे और भाषा का महत्व घटा है। जीवन शैली में दिखावा और विलासिता बढ़ी है। नैतिक मूल्यों की जगह भौतिक सुखों को प्राथमिकता दी जाने लगी है। औद्योगीकरण और शहरीकरण से प्रदूषण बढ़ा है। प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन हुआ है।

भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विविधता और सहिष्णुता है–यह एक ऐसी संस्कृति है जो प्राचीनता, आध्यात्मिकता और समरसता को आधुनिकता के साथ जोड़ती है। भारत में अनेक धर्म, भाषाएँ, कला रूप और परंपराएँ सह-अस्तित्व में रहते हुए एक अद्वितीय सांस्कृतिक पहचान बनाते हैं। भारतीय संस्कृति

* शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

की विशेषता उसकी प्राचीनता, विविधता, सहिष्णुता, आध्यात्मिकता और कला-साहित्य की समृद्धि में है। यह संस्कृति समय के साथ बदलती रही है, परंतु अपनी मूल जड़ों को सुरक्षित रखते हुए आधुनिकता को आत्मसात करती है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति आज भी विश्व में अद्वितीय और प्रेरणादायी मानी जाती है विविधता भारतीय संस्कृति का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है। भारत में 22 आधिकारिक भाषाएँ और 1000 से अधिक बोलियाँ बोली जाती हैं। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन और पारसी जैसे अनेक धर्मों के अनुयायी यहाँ सह-अस्तित्व में रहते हैं। यह विविधता केवल भाषाई और धार्मिक ही नहीं, बल्कि खान-पान, पहनावे, कला और रीति-रिवाजों में भी दिखाई देती है। यही कारण है कि भारत को "विविधता में एकता" का देश कहा जाता है।(3)

सहिष्णुता और समन्वय भारतीय संस्कृति की तीसरी विशेषता है। भारतीय समाज ने हमेशा अन्य संस्कृतियों को आत्मसात किया है। चाहे वह यूनानी, फारसी, मुगल या ब्रिटिश संस्कृति हो, भारत ने उन्हें स्वीकार किया और अपने ढंग से उनमें समन्वय स्थापित किया। "वसुधैव कुटुंबकम्" का दर्शन भारतीय संस्कृति की वैश्विक दृष्टि को दर्शाता है, जिसमें पूरी दुनिया को एक परिवार माना गया है। भारतीय संस्कृति का चौथा महत्वपूर्ण पहलू आध्यात्मिकता और दर्शन है। उपनिषदों, वेदों और गीता जैसे ग्रंथों ने जीवन को नैतिक और आध्यात्मिक दिशा दी है।(4) भारतीय संस्कृति में धर्म केवल पूजा-पाठ तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने की कला है। योग और ध्यान भारतीय संस्कृति की देन हैं, जिन्हें आज पूरी दुनिया अपनाती है। कला और साहित्य भी भारतीय संस्कृति की विशेषता हैं। शास्त्रीय संगीत, नृत्य (भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी), चित्रकला और साहित्य भारतीय संस्कृति की धरोहर हैं।(5) रामायण, महाभारत और कालिदास के साहित्यिक कार्य आज भी प्रेरणा स्रोत हैं। मंदिरों की स्थापत्य कला, अजंता-एलोरा की गुफाएँ और ताजमहल भारतीय कला की उत्कृष्टता को दर्शाते हैं।

परिवार व्यवस्था भारतीय संस्कृति का एक और महत्वपूर्ण पहलू है। संयुक्त परिवार प्रणाली भारतीय समाज की पहचान रही है।(6) इसमें सामूहिकता, सहयोग और परस्पर जिम्मेदारी की भावना निहित है। परिवार भारतीय संस्कृति में केवल आर्थिक इकाई नहीं, बल्कि भावनात्मक और नैतिक शिक्षा का केंद्र भी है। त्योहार और परंपराएँ भारतीय संस्कृति की जीवंतता को दर्शाते हैं। दीपावली, होली, ईद, क्रिसमस, गुरुपर्व जैसे त्योहार भारतीय संस्कृति की धार्मिक और सामाजिक बहुलता को दर्शाते हैं। ये त्योहार केवल धार्मिक नहीं बल्कि सामाजिक एकता और आनंद का प्रतीक हैं। हर त्योहार में भारतीय संस्कृति की सामूहिकता और उत्सवप्रियता झलकती है।(7) भारतीय संस्कृति की एक और विशेषता उसकी अनुकूलन क्षमता है। समय के साथ भारतीय समाज ने नए विचारों को अपनाया, परंतु अपनी जड़ों से जुड़ा रहा। आज भी भारतीय संस्कृति आधुनिकता को स्वीकार करती है, लेकिन अपनी परंपराओं और मूल्यों को संरक्षित रखती है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति आज भी विश्व में अद्वितीय और प्रेरणादायी मानी जाती है।(8)

निष्कर्षतः- कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति की विशेषता उसकी प्राचीनता, विविधता, सहिष्णुता, आध्यात्मिकता, कला-साहित्य की समृद्धि, परिवार व्यवस्था और त्योहारों की जीवंतता में है। यह संस्कृति समय के साथ बदलती रही है, परंतु अपनी मूल जड़ों को सुरक्षित रखते हुए आधुनिकता को आत्मसात करती रही है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति आज भी विश्व में अद्वितीय और प्रेरणादायी मानी जाती है भारतीय संस्कृति की शक्ति उसकी अनुकूलन क्षमता में है। समय के साथ भारतीय समाज ने नए विचारों को अपनाया, परंतु अपनी जड़ों से जुड़ा रहा। आज आवश्यकता है कि हम आधुनिकीकरण को अपनाते हुए अपनी परंपराओं और मूल्यों को संरक्षित करें। शिक्षा में भारतीय संस्कृति और नैतिक मूल्यों को शामिल करना चाहिए। परिवार व्यवस्था को मजबूत करना चाहिए। भारतीय कला, साहित्य और भाषाओं को प्रोत्साहित करना चाहिए। तकनीकी

विकास को पर्यावरण संरक्षण के साथ जोड़ना चाहिए। अनन्तः कहा जा सकता है की भारतीय संस्कृति को पुनर्जीवित करने के लिए आधुनिकीकरण के चकाचौंध से दूर होकर सम्मिलित प्रयास से संभव हो सकता है।

सन्दर्भ सूची

1. Chandra, B. (2009). *History of modern India*. New Delhi: Orient BlackSwan.
2. Singh, Y. (1973). *Modernization of Indian tradition*. Jaipur: Rawat Publications.
3. Kaviraj, S. (1997). *Politics in India*. New Delhi: Oxford University Press.
4. Madan, T. N. (2002). *India's religions: Perspectives on religious diversity and secularism*. New Delhi: Oxford University Press.
5. Nandy, A. (1983). *The intimate enemy: Loss and recovery of self under colonialism*. New Delhi: Oxford University Press.
6. Srinivas, M. N. (1966). *Social change in modern India*. Berkeley: University of California Press.
7. Dube, S. C. (1990). *Modernization and development: The search for alternative paradigms*. New Delhi: Vistaar Publications.
8. Panikkar, K. N. (1995). *Culture, ideology, hegemony: Intellectuals and social consciousness in colonial India*. New Delhi: Tulika.
9. Uberoi, J. P. S. (1970). *Religion, civil society, and the state: A study of Sikhism*. New Delhi: Oxford University Press.
10. Chatterjee, P. (1993). *The nation and its fragments: Colonial and postcolonial histories*. Princeton, NJ: Princeton University Press.
11. King, R. (1999). *Orientalism and religion: Postcolonial theory, India and 'the mystic East'*. London: Routledge

व्यक्ति के अकेलेपन को दूर करता मीडिया

आनंद प्रकाश*

शोध सार -

आधुनिक युग में मानव के अकेलेपन को दूर करने में मीडिया एक महत्वपूर्ण साथी की भूमिका निभा रहा है। आज जीवन के हर मोड़ पर मीडिया का सहारा लेना पड़ रहा है। सुबह की सुप्रभात से सोने के समय तक व्यक्ति मीडिया से जुड़ा रहता है। स्वास्थ्य की समस्या हो या खानपान की तरीके सभी जगह मीडिया का सहारा लिया जा रहा है लंबी दूरी के बावजूद प्रियजनों से तुरंत जुड़ सकने की क्षमता आधुनिक प्रौद्योगिकी की एक परिवर्तनकारी शक्ति है। फेसबुक और इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया मंच दुनिया भर में फैले परिवार के सदस्यों को अपने अनुभवों की साझेदारी का अवसर प्रदान करते हैं।

विशिष्ट शब्द - प्रौद्योगिकी,भावनात्मक, दिनचर्या, पारंपरिक, विचारशील, दूरस्थ संबंधों आदि

डिजिटल युग के आगमन से पहले, संबंध मुख्य रूप से व्यक्तिगत संपर्क, पत्रों और टेलीफोन कॉल्स के माध्यम से निभाए जाते थे। ये तरीके भले ही धीमे और आवृत्ति में कम होते थे, लेकिन इनमें वह भावनात्मक गहराई मौजूद थी, जो संबंधों को सुदृढ़ करती थी। इन साधनों ने परिवारों और मित्रों के बीच संपर्क के तरीके में क्रांतिकारी बदलाव किया है, जहाँ व्यस्त दिनचर्या एवं भौगोलिक दूरी के बावजूद आपस में जुड़े रहना संभव हुआ है। पारंपरिक संचार से डिजिटल संचार की ओर यह बदलाव केवल माध्यम में परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह संबंधों की प्रकृति में भी एक मौलिक बदलाव लेकर आया है। पत्रों और टेलीफोन कॉल्स जैसे प्रारंभिक संचार रूप अधिक विचारशील होते थे, जिनमें सावधानीपूर्वक उत्तर देने एवं प्रतीक्षा अवधि की आवश्यकता होती थी। इसके विपरीत, डिजिटल संचार तत्कालिकता को बढ़ावा देता है, जिससे अधिक बार लेकिन कभी-कभी कम सार्थक संवाद संपन्न होते हैं। इस बदलाव ने न केवल परिवारों के बीच भावनात्मक संबंधों को प्रभावित किया है, बल्कि इसने एक-दूसरे का देखभाल करने और विश्वास बनाए रखने के तरीके को भी परिवर्तित कर दिया है। डिजिटल प्रौद्योगिकी ने दूरस्थ संबंधों (लॉन्ग डिस्टेंस रिलेशनशिप) संबंधों को बनाए रखना भी सरल बना दिया है। चाहे वह दैनिक संदेशों के माध्यम से हो या नियमित वीडियो कॉल्स के द्वारा, प्रियजन अब अपने जीवन के क्षणों को वास्तविक समय में साझा कर सकते हैं। दुनिया के दो अलग हिस्सों में विस्तारित परिवार अब एक-दूसरे की दैनिक गतिविधियों और महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में भाग ले सकते हैं, जो कुछ दशकों पहले असंभव प्रतीत होता था।

जुड़ाव और सोशल मीडिया: फेसबुक, इंस्टाग्राम और व्हाट्सएप जैसे प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से व्यक्ति दुनिया भर के लोगों से जुड़ा रहता है। यह अपनों से संपर्क बनाए रखने और नए दोस्त बनाने का एक सुलभ माध्यम है।

मनोरंजन का साधन: अकेलेपन के समय यूट्यूब, नेटफ्लिक्स और अन्य ओटीटी प्लेटफॉर्म मनोरंजन प्रदान कर ध्यान भटकाने और मानसिक शांति देने में मदद करते हैं ।

सूचना और ज्ञान: इंटरनेट और डिजिटल मीडिया के माध्यम से व्यक्ति अपनी रुचि के विषयों को पढ़ और सीख सकता है, जिससे वह खुद को व्यस्त महसूस करता है।

खुला मंच: आज अपनी बात लिखकर व्यक्त करने और सोशल मीडिया पोस्ट के जरिए व्यक्ति अपनी भावनाओं को साझा कर सकता है, जिससे उसे यह महसूस होता है कि उसकी बात सुनी जा रही है । डिजिटल क्रांति ने मानवीय संबंधों को व्यापक रूप से बदल दिया है। वर्तमान समय में, जब प्रौद्योगिकी या तकनीक हमारे जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित कर रही है, तब हमारे संवाद, संपर्क और संबंधों को बनाए रखने के तरीकों में भी

* शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

बुनियादी परिवर्तन आया है। पारिवारिक संबंध और मित्रता, जो ऐतिहासिक रूप से आमने-सामने के संवाद से आगे बढ़ते थे, अब तकनीकी उपकरणों के प्रभाव में हैं। हालाँकि तकनीक ने नए संपर्कों के द्वार खोले हैं, इसने पारंपरिक संबंधों के लिये एक चुनौती भी उत्पन्न की है। आज के डिजिटल युग में हम दो अलग संसारों—डिजिटल और भौतिक के बीच संतुलन निर्माण के लिये निरंतर संघर्षरत हैं। तकनीक ने संवाद को सरल बना दिया है, लेकिन इसके साथ-साथ इसने भावनात्मक जुड़ाव, निजता और सार्थक संवाद के मामलों में नई जटिलताएँ भी उत्पन्न की हैं। पहले जो संबंध निकटस्थता और साझा अनुभवों पर आधारित होते थे, वे अब तकनीक पर निर्भर होते जा रहे हैं। इस परिदृश्य में प्रश्न यह है कि हम परिवार और मित्रता जैसे संबंधों के लिये आधारभूत रहे विश्वास, समानुभूति एवं भावनात्मक गहराई जैसे सारभूत मूल्यों का त्याग किये बिना डिजिटल कनेक्टिविटी को किस प्रकार अपना सकते हैं।

प्रौद्योगिकी की परिवर्तनकारी शक्ति

- **दूरी के बावजूद पास का अनुभव :** प्रौद्योगिकी का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह भौगोलिक दूरी को कम करने में सक्षम है। वीडियो कॉल्स, इंस्टेंट मैसेजिंग और सोशल मीडिया मंचों ने परिवारों एवं मित्रों को एक-दूसरे से जुड़े रहने का अवसर प्रदान किया है, चाहे वे कहीं रहते हों। देश के दूरस्थ भागों या विदेश में कार्यरत माता-पिता अपने बच्चों से नियमित रूप से संपर्क कर सकते हैं और लंबे समय से संपर्क में नहीं रहे मित्र सोशल नेटवर्क्स के माध्यम से फिर से जुड़ सकते हैं। कनेक्टिविटी का यह स्तर कुछ दशक पहले अकल्पनीय था और इसने 'निकटता' को नया अर्थ प्रदान किया है।

  लंबी दूरी के बावजूद प्रियजनों से तुरंत जुड़ सकने की क्षमता आधुनिक प्रौद्योगिकी की एक परिवर्तनकारी शक्ति है। फेसबुक और इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया मंच दुनिया भर में फैले परिवार के सदस्यों को अपने अनुभवों की साझेदारी का अवसर प्रदान करते हैं।

  खाली समय में सुख-दुःख की साझेदारी: सोशल मीडिया मंच व्यक्तियों को तत्क्षण सुख-दुःख की साझेदारी कर सकने की अनुमति देते हैं। इससे परिवारों और मित्रों को एक-दूसरे के जीवन का हिस्सा बनने का अवसर प्राप्त होता है, भले ही वे भौतिक रूप से दूर हों। इस साझा आभासी उपस्थिति से अपनापन और भागीदारी की भावना उत्पन्न होती है।
- **सहयोग और समर्थन में वृद्धि:** प्रौद्योगिकी सहयोग और आपसी समर्थन को बढ़ावा देती है। परिवार के सदस्य डिजिटल कैलेंडर का उपयोग कर अपने कार्यक्रमों का समन्वय कर सकते हैं, जबकि मित्र समूह चैट्स में शामिल होकर आयोजनों की योजना बना सकते हैं या संकटों के दौरान भावनात्मक समर्थन प्रदान कर सकते हैं। ऑनलाइन फोरम और सपोर्ट ग्रुप्स भी व्यक्तियों को सलाह प्राप्त करने या अनुभव साझा करने के लिये अवसर प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रौद्योगिकी लोगों को सार्थक तरीकों से समर्थन प्रदान करने में सक्षम बनाती है। डिजिटल मंच ने आवश्यकता के समय भावनात्मक एवं व्यावहारिक समर्थन प्रदान करने के नए रास्ते खोले हैं। इसके अतिरिक्त, को-पैरेंटिंग, वित्तीय योजना या स्वास्थ्य ट्रैकिंग के लिये डिज़ाइन किये गए ऐप्स परिवारों को ज़िम्मेदारियों को अधिक प्रभावी तरीके से प्रबंधित करने में मदद कर सकते हैं।
- **समावेशिता और पहुँच:** दिव्यांगजनों के लिये या दूर-दराज़ के क्षेत्रों के लोगों के लिये प्रौद्योगिकी कनेक्टिविटी के अद्वितीय अवसर प्रदान करती है। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, सहायक संचार उपकरण और समावेशी ऐप्स बाधाओं को दूर करते हैं, जिससे हर किसी के लिये पारिवारिक एवं सामाजिक गतिविधियों में भाग लेना संभव हो पाता है। वॉयस-टू-टेक्स्ट और संवर्द्धित श्रवण उपकरण जैसे नवाचार सुनिश्चित करते हैं कि संचार सभी के लिये सुलभ हो। ऑगमेंटेड रियलिटी (AR) और वर्चुअल रियलिटी (VR) जैसी उभरती प्रौद्योगिकियाँ लोगों को नए रूप में एकजुट कर रही हैं।

- **सतही संवाद:** जबकि डिजिटल संचार सुविधाजनक है, यह आमने-सामने के संवाद की गंभीरता का अभाव रखता है। टेक्स्ट संदेश और इमोजी भावनाओं को पूरी तरह से व्यक्त नहीं कर पाते, जिससे गलतफहमियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। डिजिटल संचार पर अत्यधिक निर्भरता से संबंध सतही बन सकते हैं, जहाँ सार्थक संलग्नता का अभाव हो सकता है। कई मामलों में ऑनलाइन संवाद की संक्षिप्तता खुले एवं ईमानदार संवाद में बाधा उत्पन्न करती है। इससे भावनात्मक अलगाव और संबंधों में गंभीर मुद्दों को हल करने की अक्षमता उत्पन्न हो सकती है। ऑनलाइन संचार की खामियाँ आपसी विश्वास को नष्ट कर सकती हैं और लोगों को अपनी सच्ची भावनाओं को व्यक्त करने से रोक सकती हैं, जिससे दीर्घावधि में संबंधों को क्षति पहुँच सकती है।
- **विचलन और अति-उपयोग:** प्रौद्योगिकी की व्यापकता व्यक्तियों को अपने प्रियजनों के साथ गुणवत्तापूर्ण समय बिताने से विचलित कर सकती है। डिनर टेबल पर स्मार्टफोन का उपयोग या मेलजोल के दौरान मित्रों का ध्यान सोशल मीडिया पर होना इसके सामान्य उदाहरण हैं। ऐसे व्यवहार अवहेलना और अलगाव की भावना उत्पन्न कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ ऐप्स और खेलों की लत ध्यान को पूरी तरह से अपनी ओर आकर्षित कर सकती है, जिससे सार्थक बातचीत में शामिल होना कठिन हो जाता है। अति-उपयोग की यह स्थिति परिवार के सदस्यों और मित्रों के बीच असंतोष उत्पन्न कर सकती है।
- **निजता का क्षरण:** डिजिटल युग ने निजता की सीमाओं को धुँधला कर दिया है। सोशल मीडिया पर व्यक्तिगत घटनाओं की निरंतर साझेदारी आवश्यकता से अधिक जानकारी की साझेदारी, जलन या गलतफहमियाँ उत्पन्न कर सकता है। इसके अतिरिक्त, परिवारों के भीतर अत्यधिक निगरानी या नियंत्रण असंतोष उत्पन्न कर सकता है और आपसी विश्वास को कम कर सकता है। डिजिटल परिदृश्य कई बार व्यक्तियों को ऐसा अनुभव प्रदान कर सकता है कि उनका व्यक्तिगत जीवन लगातार उजागर हो रहा है। निजता या गोपनीयता का यह क्षरण असुविधा और तनाव उत्पन्न कर सकता है, क्योंकि व्यक्तियों को लग सकता है कि परिवारजनों या मित्रों द्वारा उनकी स्वायत्तता से समझौता हो रहा है।

  पीढ़ीगत विभाजन: प्रौद्योगिकी के अंगीकरण में पीढ़ियों के बीच बड़ा अंतराल दिखाई देता है। परिवार के युवा सदस्य डिजिटल उपकरणों के प्रयोग में अधिक अनुकूल होते हैं, जबकि वृद्ध सदस्य ऐसे अनुकूलन में कठिनाई महसूस कर सकते हैं। यह डिजिटल विभाजन संचार को बाधित कर सकता है और अकेलेपन की भावना उत्पन्न कर सकता है। यह अंतराल प्रौद्योगिकी के प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों में भी प्रकट होता है, जहाँ पुरानी पीढ़ियाँ पारंपरिक तरीकों को महत्त्व देती हैं, वहीं युवा पीढ़ियाँ डिजिटल सुविधा को प्राथमिकता देती हैं। इस विभाजन को दूर करने के लिये आपसी समझ और धैर्य की आवश्यकता होती है। उपयोगकर्त्ता-अनुकूल उपकरण प्रदान करना और साझा लर्निंग के अवसर उत्पन्न करना इन खामियों को दूर करने में मदद कर सकता है।

निष्कर्ष - वर्तमान समय में डिजिटल संचार ने लोगों को, दैनिक गतिविधियों से लेकर प्रमुख उपलब्धियों तक, जीवन घटनाक्रमों की साझेदारी की अनुमति दी है। इससे संवाद की आवृत्ति तो बढ़ी है, साथ ही संबंधों की गुणवत्ता में भी परिवर्तन आया है। प्रौद्योगिकी की तात्कालिकता कभी-कभी सतही संबंधों को बढ़ावा देती है, जिससे यह आवश्यक हो जाता है कि सुविधा को सार्थक संलग्नता के साथ संतुलित किया जाना चाहिये। व्हाट्सएप, फेसबुक मैसेंजर और स्नैपचैट जैसे इंस्टेंट मैसेजिंग ऐप्स उपयोगकर्त्ताओं को त्वरित रूप से विचारों, फोटो एवं वीडियो की रियल-टाइम साझेदारी की अनुमति देते हैं, जिससे संचार अधिक कुशल लेकिन प्रायः क्षणिक हो जाता है। जबकि सूचनाओं का यह निरंतर प्रवाह लोगों को परस्पर जुड़े रहने में मदद करता है, यह संवादों को लेन-देन संबंध में भी परिणत कर सकता है। चुनौती इस बात में है कि किस प्रकार इन संबंधों और संवादों में भावनात्मक मूल्य बनाए रखा जाए, जो गहन संबंधों को बढ़ावा देने के लिये आवश्यक है। आज